इन्द्रं वर्धन्तो अप्तुरः कृण्वन्तो विश्वमार्यम् अपघन्तो अरावणः॥

आर्य संकल्प

(बिहार राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा का मासिक मुख-पत्र)

वर्ष-37 मई अंक-4

महर्षि दयानन्द

बिहार राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा
कार्यालय : श्री मुनीश्वरानन्द भवन, नयाटोला, पटना-4 (बिहार)

सम्पादक

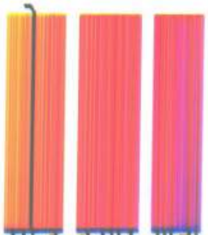

रमेन्द्र कुमार गुप्ता
मो. 9334184136

सह सम्पादक
संजय सत्यार्थी
मो. 9006166168
प्रेम कुमार आर्य
मो. 9570913817

सम्पादक मंडल
पं० व्यासनन्दन शास्त्री
श्री बिन्देश्वरी शर्मा
मो. 8544088138

संरक्षक
गंगा प्रसाद
सभा प्रधान

कोषाध्यक्ष
सत्यदेव गुप्ता
स्वत्वाधिकारी एवं प्रकाशक
बिहार राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा
श्री मुनीश्वरानन्द भवन
नयाटोला, पटना-800 004
दूरभाष : 07488199737
E-mail_arya.sankalp3@gmail.com
सदस्यता शुल्क
एक प्रति : 15/-
वार्षिक : 120/-

मुद्रक :
जय उमा प्रिन्टर्स
मो. 9430246879

संपादकीय

असली जीत बाहर की जीत नहीं भीतर की जीत होती है।

आज मनुष्य विज्ञान के सहारे प्रकृति पर विजय प्राप्त कर उतर रहा है। प्रकृति पर विजय पा कर उसके पास हर तरह के साधन हो गये हैं। विज्ञान ने मनुष्य को शक्तिशाली बना दिया है। नयी-नयी मशीनें बन गई है जिसके फल स्वरूप वह प्रकृति का स्वामी बन गया है। व्यक्ति थोड़ा सा धन-सम्पदा से परिपूर्ण हो जाता है तो चाँद पर जमीन लेने की बात करता है। अपने स्वार्थ में इतना गिर जाता है, जिसकी इजाजत कम से कम भारतीय संस्कृति नहीं देती। भारतीय संस्कृति कहती है चाहे तू कितना ही बड़ा साम्राज्य क्यों न खड़ा कर ले, कितने ही आविष्कार क्यों न कर लो जब तक तुम्हारे अन्दर के शत्रु लोभ, लालच, अहंकार, झूठ बेईमानी, छल, कपट, आदि पर विजय प्राप्त नहीं करेंगे तब तक यह बाहरी विजय, विजय नहीं पराजय ही कहलायेगा।

सिकन्दर जब भारत को जीतने के लिये चला था, तब अपने गुरू अरस्तु से कहा था- मैं तुम्हारे लिये वहाँ से क्या तोहफा लाऊँगा। अरस्तु ने कहा था- वहाँ से कोई संत लेते आना, क्योंकि वे लोग विचारों में बहुत ऊँचे पहुँचे हैं। लौटते समय सिकन्दर ने अपने दूत से कहा। मुझे गुरू के लिये संत ले जाना है। पता चला कि डेरा के बगल में ही एक संत रहते हैं। संत के पास दूत को भेजा संत धूप में आराम फर्मा रहे थे। दूतों ने सिकन्दर का संदेश सुनाया। संत ने सिर हिलाकर मना कर दिया, सिकन्दर के पास जब यह उत्तर पहुँचा तो वह स्वयं संत के सामने उपस्थित हुआ और कहा कि मेरा नाम सिकन्दर है, मेरे सामने इनकारी। मैं चाहूँ तो अभी तुम्हारा सर धड़ से अलग कर सकता हूँ। सिकन्दर की धमकी सुनकर संत ने मुस्कुराते हुए कहा- तुम किसको मार सकते हो? यह शरीर मैं नहीं हूँ। मेरा शरीर वह खोल है जिसके भीतर आत्मा बैठा है। आत्मा नित्य है वह मर नहीं सकता। संत की यह बात सुनकर सिकन्दर का सिर झुक गया। उसने कहा मैं दुनियाँ भर को जीता संत ने मुझे जीत लिया। चूँकि सिकन्दर

शेष पेज 4 पर.........

आर्य संकल्प

-: सूची :-

क्रम	विवरण	पृष्ठ संख्या
1.	सम्पादकीय	
2.	वेद मंत्र	1
3.	कविता	2
4.	बाल ब्रह्मचारी	3
5.	आज कार्य की संभाल है	10
6.	मोबाइल में बैटरी	12
7.	आर्यसमाज और विश्व बन्धुत्व	15
8.	गुरु का वरण	18
9.	ग्यानी पिण्डी दास जी	21
10.	संस्कार	27
11.	समाचार	31

इस पत्रिका में दिये गये लेख लेखकों के अपने विचार हैं, इससे सम्पादक का कोई सम्बन्ध नहीं है ।

मई

माता-पिता की सेवा का फल

न यस्य सातुर्जनितोरवारि न मातरापितरा नू चिंदिष्टौ।
अधा मित्रो न सुधितः पावकोऽग्निदीदाय मानुषीषु विक्षु ॥

(ऋग्वेद 4/6/7)

पदार्थ- हे मनुष्यों! (**यस्य**) जो (**सातुः**) सत्य और असत्य का ज्ञान करने-करानेवाले (**जनितोः**) माता और पिता का प्रिय (**न**) नहीं (**अवारि**) स्वीकार किया जाता है और (**चित्**) जिसके द्वारा (**मातरा**) माता और (**पितर**) पिता (इष्टौ) पूजा (सेवा-सम्मान) के योग्य (**न**) नहीं स्वीकार किये जाते हैं, वह दुःख भोगता है (**अधा**) इसके अतिरिक्त जो अपने माता-पिता का सत्कार करता है, वह (**सुधितः**) उत्तम प्रकार हितकारी (**मित्रः**) मित्र, (**अग्निः**) ज्ञानी (**न**) और (**पावकः**) पवित्र (**मानुषीषु**) मनुष्यों की (**विक्षु**) प्रजाओं में (**नु**) शीघ्र (**दीदाय**) प्रकाशित (प्रशंसित) होता है।

भावार्थ- माता और पिता का सब सन्तानों पर उपकार होता है। यद्यपि उनके उपकारों का बदला सन्तानें पूर्णतः उतार नहीं सकते, तथापि माता-पिता, दादी-दादा, नानी-नाना, आदि पितरों की सेवा करना प्रत्येक सन्तान का परमधर्म है। जो सन्तान माता-पिता, आदि पितरों की सेवा और उनका सम्मान नहीं करते, उनको अपयश और दुःख प्राप्त होते हैं, किन्तु जो सन्तान अपने माता-पिता, आदि की सेवा और उनका सम्मान करते हैं, उन्हें सर्वत्र यश और सब सुख प्राप्त होते हैं, अतः सब संतानों को अपने माता-पिता, आदि पितरों की सदा सेवा और उनका सम्मान करने चाहियें। इसे ही पितृयज्ञ कहते हैं और यही सुख का मार्ग है।

काव्यरूपान्तरण-

माता-पिता के नहीं जो प्यारे, सेवा-मान नहीं करते।
भाग्यहीन सन्तानें हैं वे, दुःख बहुत जग में भरते ॥1॥
प्यारे हैं जो माता-पिता के, सेवा-मान किये जाते।
बनें यशस्वी भाग्यवान् वे, जीवन में सब सुख पाते ॥2॥

डॉ0 वेद प्रकाश, मेरठ

ओ३म्

हमें इसी दिन नववर्ष पर्व मनाना चाहिए

31 मार्च सन् 2014 को शुभ नव-वर्ष है आया,
हमें इसी मिती चैत सुदी एकम् को ही यह पावन पर्व मनाना चाहिए।
आज हम सब मिलकर, पुराने भेद-भावों को तजकर,
प्रेम व उत्साह से हमें इस पर्व को मनाना चाहिए ॥
इस पर्व की एक नहीं, दो नहीं, एक बहुत बड़ी श्रृंखला है
इस श्रृंखला को हमें अवश्य ही जानना चाहिए ॥
सर्वप्रथम इसी दिन ईश्वर ने मनुष्यों के लिए रची थी यह सृष्टि
इसलिए हमें ईश्वर का गुण-गान करना चाहिए ॥
इसी दिन ईश्वर ने की थी मानव उत्पत्ति,
मोक्ष प्राप्ति के लिए दिया था वेद-ज्ञान,
इसलिए हमें वेदानुकूल चलना चाहिए।
श्रीराम व युधिष्ठिर का हुआ था इसी दिन राज्याभिषेक,
दिया था सुशासन, हमें भी उन्ही का अनुसरण करना चाहिए।
इसी दिन महर्षि देव दयानन्द ने, वेद प्रचारार्थ की थी आर्य समाज की स्थापना,
हमें वेद के पावन संदेश को घर-घर पहुँचाना चाहिए ॥
इसी दिन वीर विक्रमादित्य ने करके आक्रमणकारियों का दमन,
किया था शान्तिपूर्ण राज्य, हमें भी उन्हीं से शिक्षा लेनी चाहिए ॥
आज पाकिस्तान भेज रहा है हमारे देश में आतंकी,
सिखलाता है बनाकर अपने देश में ही केन्द्र, उन केन्द्रों को ही नष्ट करना चाहिए ।
तुष्टिकरण की कमजोर नीति, से, पनप रहे हैं देश में राष्ट्रदोही,
देश का कर दिया हाल-बेहाल, उन्हें देश से बाहर निकाल देना चाहिए ॥
प्रसन्नता की बात है कि अब चल रही है राष्ट्रवाद की लहर,
अब हमें स्वार्थ छोड़, राष्ट्रहित के कार्यों में जुट जाना चाहिए।
मिला है अब हमें सन् 2014 में एक सुअवसर, तब भेजकर अच्छे लोगों को संसद में
बेहाल हुए देश को 'खुशहाल' बनाना चाहिए ।
हमें इसी मिती चैत सुदी एकम् को ही यह पावन पर्व मनाना चाहिए ।

- खुशहाल चन्द आर्य, कोलकाता

बाल ब्रह्मचारी सत्यवादी, योद्धा महर्षि दयानन्द और महाभारत के कुछ पात्र

कुन्दन लाल आर्य, चूनियाँवाला

कौरवों के प्रसिद्ध वंश में राजा शान्तनु के घर श्रीमती गंगादेवी की कुक्षि से एक बालक उत्पन्न हुआ जिसका नाम देवदत्त रखा गया। जब छब्बीस वर्ष का हुआ तो उसकी माता का देहान्त हो गया। उनके पिता महाराज शान्तनु ने धीवर राजा की लड़की सत्यवती से विवाह करने की इच्छा प्रकट की। धीवरराज ने यह शर्त लगाई कि जो लड़का मेरी लड़की के गर्भ से उत्पन्न हो वही राज्य का अधिकारी बने परन्तु यह शर्त महाराज ने न मानी। देवदत्त को इस बात का पता लग गया, और वह खुद धीवरराज के पास गया और कहा कि आप अपनी लड़की की शादी मेरे पिता जी से कर देवें मैं अपने राज्याधिकार का त्याग करता हूँ। धीवरराज ने कहा आपने तो अपना अधिकार छोड़ दिया, परन्तु आप की सन्तान इस राज्य पर अपना अधिकार जतायेगी। इस पर देवदत्त ने यह भीष्म प्रतिज्ञा की, कि मैं आजन्म ब्रह्मचारी रहूँगा और शादी नहीं करूँगा। पिता के सुख के लिए पुत्र का अद्वितीय त्याग था, इस भीष्म प्रतिज्ञा के कारण देवदत्त का नाम भीष्म हो गया। वह आजन्म ब्रह्मचारी रहे। इसलिए उनको पितामह भी कहा जाता है क्योंकि शास्त्रों में ऐसा ही विधान है, परन्तु यह सब कुछ होते हुए भी और वेद वेदांग की शिक्षा प्राप्त करते हुए भी जब उनसे प्रश्न किया गया की भरी सभा में द्रौपदी का अपमान होते देख कर और पाण्डवों के साथ दगाबाजी देखकर भी आप चुप क्यों रहे और आपने ऐसे अन्याय के खिलाफ आवाज तक क्यों न उठाई तो उनका जवाब महाभारत के इस श्लोक में वर्णन है।

अर्थस्य पुरुषो दासो दासस्त्वर्थो न कस्यचित्।
इति सत्यं महाराजः बद्धहोऽस्म्यर्थेन कौरवेः ॥

मनुष्य अर्थ का दास है। अर्थ किसी का दास नहीं। महाराज यह बात सत्य है, मैं उस समय में कौरवों के अर्थ से बन्धा हुआ था।

और

आज से एक सौ चालीस साल पहले, गुजरात काठियावाड़ के मौरवी राज्य अन्तर्गत टंकारा नगर में कर्षण जी तिवारी के घर एक बालक पैदा हुआ जिसका नाम मूलशंकर रखा गया। जिसने 14 साल की आयु में सच्चे शिव की तलाश और मृत्यु पर विजय प्राप्त करने की भीष्म प्रतिज्ञा की और अपने पिता के सुख के लिए नहीं अपितु संसार मात्र के सुख के लिए आजन्म ब्रह्मचारी रहे, और इस तरह भीष्म और पितामह होकर दयानन्द नाम रखाया। बाल ब्रह्मचारी भीष्म के कहे उपरोक्त की धज्जियां

उड़ा कर सारी आयु अर्थ का दास न होकर जिसने अर्थ को हमेशा ही दास बनाये रखा, [illegible] उसके उदाहरणार्थ कुछ घटनाएं निम्नलिखित हैं-

1- महर्षि दयानन्द के पिता जमींदार थे और शाहूकारा भी करते थे और सरकार में भी अच्छे कर्मचारी थे। और इस तरह सुख आराम के लिए उनके घर में सब सामान उपस्थित थे, और उनके विवाह की तैयारियां भी पूरे जोर से हो रही थी। सिर्फ एक महीना बाकी रह गया था कि पूरे बाईस साल की भरी जवानी में भी पितृ-सम्पत्ति उनको अर्थ का दास न बना सकी।

2- योगियों की तलाश में जब महर्षि दयानन्द हिमालय की बर्फानी चोटियों पर घूमते फिरते थे तो कुछ दिन के लिए वे ओखी मठ में भी ठहरे थे। ओखी मठ का मुख्य महन्त स्वामी जी के ज्ञान और गुणों पर मोहित हो गया। और स्वामी जी को अपना चेला बनाने की प्रेरणा करते हुए बोला। "यदि तुम हमारे शिष्य बन जाओ तो इस गद्दी पर महन्त बन जाओगे। लाखों रुपये की सम्पत्ति तुम्हारे हाथ में हो जाएगी, तुम महन्त कहलाओगे और इस तरह मान प्रतिष्ठा भी बहुत होगी, इस प्रकार स्वच्छन्दता पूर्ण यथेष्ट सुख भोगोगे, इस पर महर्षि जी ने उत्तर दिया, कि मेरे पिता की सम्पत्ति आपके पूजा पाठ या पाखण्ड द्वारा एकत्रित की हुई पूंजी से कई गुणा अधिक थी, जब मैं उसे ही त्याग कर आया हूँ तो आपके धन धान्य की ओर कब ध्यान कर सकता हूँ। जिस उद्देश्य को लेकर मैंने सांसारिक सुखों से मुंह मोड़ा है और ऐश्वर्यशाली [illegible] कि इस उद्देश्य पर न तो तुम चलते हो और न ही तुम लोगों को इसका कुछ ज्ञान है। इस अवस्था में चेला बनना तो दूर रहा, मेरा तो अब तुम्हारे पास रहना भी असम्भव है। और यह कहकर दूसरे ही दिन ओखी मठ से प्रस्थान करके जोशी मठ चले गये। अब की भी अर्थ इन्हें दास बनाने में असमर्थ ही रहा।

3- जब महाराज काशी पहली बार पधारे और मूर्ति-पूजा का जोरदार खण्डन करते हुए काशी के समस्त पण्डितों को शास्त्रार्थ के लिए ललकारा तो महाराज रामनगर ने महर्षि को कहलवा भेजा कि यदि आप मूर्तिपूजा का खण्डन न करें तो अपको 100) रुपया माहवार वजीफा मिल जाया करेगा तो महर्षि ने कहला भेजा कि यदि महाराज अपना सारा राजपाट भी दे दें तब भी मैं मूर्तिपूजा का खण्डन नहीं छोड़ सकता।

4- जब महाराज बड़ौदा राज्य में थे तो श्री माधोराव दीवान उनके बहुत भक्त बन गये थे, और यह बात बहुत मशहूर हो चुकी थी। चुनांचे एक राज्याधिकारी पर मुकदमा बना हुआ था, उसके दामाद ने एक कर्मचारी पण्डित कृष्णाराम को कहा- कि यदि स्वामी जी श्री माधोराव से सिफारिश करके मेरे ससुर को छुड़ा

देवें तो मैं बीस हजार रुपयो उनको वेदभाष्य के लिए दे दूंगा। पण्डित कृष्णराम ने मौका पाकर यह प्रस्ताव स्वामी जी के सामने रखा, इस पर महाराज ने क्रोध में आकर कहा कि ऐसे प्रस्ताव मेरे सामने रखते हुए तुम्हें शर्म आनी चाहिए। रुपये का प्रलोभन दिखाकर ऐसे प्रस्ताव हमारे सामने फिर कभी न रखना।

5. देहली दर्बार के वक्त जब महाराज देहली में थे तो एक सेठ ने दो लाख रुपया नकद गदहे पर लदवा कर स्वामी जी को भेंट करना चाहा, इस शर्त पर कि आप मूर्तिपूजा का खण्डन करना छोड़ दें। महाराज ने उसको फटकार देते हुए कहा- कि उठा लो अपना रुपया और चलते बनो।

6. संवत् 1880 में जब महाराज काशी में पांचवीं बार पधारे तो एक दिन वैंक्ट गिरि के महाराज दो तैलंग ब्राह्मणों के साथ महाराज से मिलने के लिए आए। उन्होंने कहा कि क्या प्रमाण है कि वेद ही ईश्वर की वाणी है और बाईबल अथवा कुरान नहीं। महाराज ने उत्तर दिया, कि कुरान आदि में अनेक कथाएं सृष्टि-क्रम और ईश्वर के गुण, कर्म, स्वभाव के विरुद्ध हैं। कुरान में काफरों के विनाश, अथवा स्वर्ग में सुरा, हूर आदि के रहने की बातें हैं, इसलिए वह ईश्वर की वाणी नहीं हो सकती। इसके पश्चात् मूर्तिपूजा की बात चली, स्वामी जी ने कहा आप महाराज होकर किस प्रकार मूर्तिपूजा का पोषण करते हैं। यदि आप इसका पोषण न करें तो आपके लिए ऐसा तो नहीं है कि दरिद्र ब्राह्मण के समान आपका उदर-पोषण न हो सके। राजा ने स्वीकार किया कि आप की बात कई अंशों में ठीक है परन्तु यदि आप अन्य बातों का प्रचार करें और मूर्तिपूजा की बात सबसे पीछे के लिए रखें तो आपके वेद भाष्य के लिए जितने धन की आवश्यकता होगी हम देंगे। महाराज ने यह सुन कर कुछ आवेश में आकर कहा आप इन बातों को नहीं समझते, मैं क्या कोई दुकानदार हूँ जो रुपये के कारण अपने कर्त्तव्य को आगे पीछे करूं। अर्थ ने इस बार भी महाराज से पछाड़ खाई।

7. एक दिन महाराणा उदयपुर ने अत्यन्त नम्र भाव से निवेदन किया कि राजनीति के सिद्धान्तानुसार आप को मूर्तिपूजा का खण्डन नहीं करना चाहिए, यह तो आप जानते ही हैं कि यह राज्य एकलिंग महादेव के अधीन है। आप एकलिंग के मन्दिर के महन्त बन जावें। कई लाख रुपये पर आपका अधिकार हो जावेगा और एक अर्थ में यह राज्य भी आपके अधीन हो जाएगा। महर्षि बहुत शान्त स्वभाव के थे, और उनको क्रोध बहुत कम आता था, परन्तु महाराणा की यह बात सुन कर उन्हें आवेश आ गया, और कड़क कर बोले कि आप मुझे लोभ देकर सर्वशक्तिमान् परमेश्वर की आज्ञा भंग

कराना चाहते हैं। ये छोटा सा राज्य और इसके मन्दिर जिससे मैं एक दौड़ में बाहर हो सकता हूं। मुझे कभी भी वेद और ईश्वर की आज्ञा भंग [illegible] करने पर उतारू नहीं कर सकते। मैं कदापि सत्य को छोड़ तथा छिपा नहीं सकता। आगे से आप विचार कर बात किया करें। महाराणा महर्षि के वचनों को सुन कर स्तम्भित हो गये। उन्हें कभी ऐसे वचन सुनने की आशा न थी, अन्त में महाराणा ने कहा कि अब मुझे ज्ञान हो गया है कि आप अपने विचारों पर कितने दृढ़ हैं। अर्थ अब भी बाल ब्रह्मचारी भीष्म दयानन्द को दास न बना सका। और सारी आयु ही बालब्रह्मचारी भीष्म के श्लोक की छज्जियां उड़ाते रहे।

ये माया ठगनी भई, ठगत फिरे सब देश ।
जिसने यह ठगनी ठगी तिसको है आदेश ॥

पूर्ण निर्लोभी बालब्रह्मचारी महर्षि दयानन्द की जय।

सत्यवादी युधिष्ठिर

धर्म पुत्र युधिष्ठिर सत्यवादी था यह तो जगद् विख्यात ही है और इसलिए दोस्त दुश्मन इसका विश्वास भी करते थे, महाभारत के युद्ध में जब गुरु द्रोणाचार्य सुप्रीम कमाण्डर की हैसियत से युद्ध कर रहे थे तो उन्होंने पाण्डवों का काफिया तंग कर दिया था, तब कृष्ण और अर्जुन ने विचार किया जब तक गुरु द्रोणाचार्य को समाप्त नहीं कर दिया जायेगा तब तक युद्ध नहीं जीता जा सकता, द्रोणाचार्य के कान में यह आवाज पहुंचाई जावे कि अश्वथामा मारा गया। तब वे निरुत्साह होकर हथियार छोड़ देंगे और उनको मारना सहज हो जायेगा, और यह भी [illegible] उनको मालूम था कि द्रोणाचार्य केवल युधिष्ठिर की ही बात को सत्य मानेंगे किसी और की बात को नहीं। और युधिष्ठिर यह झूठ बात कहने को तैयार न होगा। तब यह सलाह ठहरी कि एक हाथी का नाम अश्वत्थामा रखा जावें, और युधिष्ठिर के सामने उसे मार डाला जावें, ऐसा ही किया गया, और युधिष्ठिर को यह कहा गया कि वह द्रोणाचार्य के सामने जाकर यह कह दे कि अश्वत्थामा मारा गया परन्तु वह इसके लिए भी तैयार न हुआ। फिर कृष्ण और अर्जुन ने इसको जंग में हार जाने का भय दिखा कर यह कहा कि तुम द्रोण के सामने इतनी बात कह दो कि "अश्वत्थामा हतो-नरो वा कुञ्जरो वा" यानि अश्वत्थामा मारा गया। आदमी या हाथी, बाकी हम संभाल लेंगे, अर्थात् जब द्रोणाचार्य के सामने जाकर युधिष्ठिर ने यह शब्द मुंह से निकाले "अश्वत्थामा हतो" तब उसी वक्त अर्जुन और कृष्ण ने जंगी बाजे बजाने शुरू कर दिये, ताकि युधिष्ठिर के मुंह से निकले हुए दूसरे शब्द जो संदेह पैदा कर सकते थे वह द्रोण के कान तक न पहुंचे और ऐसा ही हुआ। और द्रोणाचार्य पुत्र घात की खबर सुनकर युद्ध से निवृत्त हो गया और धृष्टद्युम्न ने उसको मार डाला और तब ही महाभारत युद्ध में पाण्डवों

की जीत हो सकी।

और

इसी तरह महर्षि के सामने भी इसी किस्म की स्थिति आई। जब सन् 1865 में महर्षि ने बम्बई में अपने प्रचार की धूम मचा रखी थी तब महर्षि केकुछ भगतों के मन में यह विचार पैदा हुआ कि महर्षि की विचार धारा के प्रचार को स्थायी बनाए रखने के लिए यहां आर्यसमाज कायम करना चाहिए। और महर्षि जी ने भी उनको इस कार्य को करने के लिए उत्साह दिलाया था, तो एक सज्जन राजकृष्ण महाराज ने आर्यसमाज के नियम बनाने की इच्छा प्रकट की, तो स्वामी जी ने कहा कि नियम हम स्वयं बना देंगे। और नियमावली बनादी। राजकृष्ण महाराज ने कहा कि नियमों में जीव ब्रह्म के एकत्व का समावेश होना चाहिए, पीछे से उसे छोड़ देंगे। ऐसा करने से अनेक लोगों को आर्यसमाज की ओर आकृष्ट कर सकेंगे। इस पर महाराज ने कहा कि ''मैं आर्यसमाज को असत्य पर कदापि स्थापित नहीं करूंगा।'' इस पर राजकृष्ण महाराज इतने चिढ़ गये कि आर्यसमाज के मेम्बर होने वालों की जो सूची बना कर लाये थे उसे लेकर वे स्वामी जी के पास से चले गये, और स्वामी जी काविरोध करने लगे। उनका यह विचार था कि अब आर्य समाज शायद बन ही न सकेगा लेकिन महर्षि के सत्य पर आरूढ़ रहने सेकुछ ही दिनों के बाद चैत्र शुक्ता 5 संवत् 1932 तदनुसार 10 अप्रैल 1875 ई० में गिरगांव रोड पर डाक्टर मानक जी की बागबाड़ी में सायंके साढ़े पांच बजे बम्बई में आर्य समाज स्थापित होगया, और एक सौ के करीब आर्यसमाज के सभासद् बन गये।

2. लाहौर में ब्रह्मसमाज के सभासदों ने कहा कि यदि आर्यसमाज का तीसरा नियम न रखो तो हम भी आर्यसमाज में सम्मिलित हो सकते हैं, परन्तु स्वामी जी ने इनका यह प्रस्ताव स्वीकार नही किया।

3. लाहौर में ही राय बहादुर मूलराज एम० ए० आर्यसमाज के उपप्रधान ने महाराज को सम्मति दी कि तीसरे नियम में जो वाक्य लिखा है कि वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। इसमें से यदि सत्य शब्द निकाल दिया जाये तो यह नियम बहुत व्यापक हो जावेगा। और किसी को आर्य समाज में प्रवेश करने में संकोच न होगा परन्तु स्वामी जी ने इनकी यह बात भी न मानी।

4. महाराणा उदयपुर ने महाराज से कहा कि आप मूर्तिपूजा का खण्डन न करें, इससे जन साधारण आपके विरूद्ध हो जाते हैं। आप नीति का अवलम्बन करके अन्य विषयों पर उपदेश करें ताकि लोग शीघ्र आप की बात को मान लें। स्वामी जी ने महाराणा जी को उत्तर दिया कि मैं सत्य को नहीं छोड़ सकता और न छिपा सकता हूं चाहे कोई कितना ही विरोधी

क्यों न हो।

5. बरेली में व्याख्यान देते समय [illegible]

प्रकरण वश महाराज ने कहा कि हिन्दू लोग एक तरफ तो द्रौपदी के पांच पति बतलाते हैं और दूसरी तरफ इसको पांच कंवारियों में शुमार करते हैं, इस पर व्याख्यान में आए हुए अंग्रेज कमिश्नर वगैरह मुस्कराने लग पड़े। जिस वक्त महाराज की नजर उन पर पड़ी तो महाराज ने उनकी तरफ रूख करके कहा कि भला हिन्दू लोग तो विद्याहीन हो चुके हैं, जो ऐसी बातें कहते और मानते हैं, लेकिन इन अंग्रेजों को देखो, पढ़े लिखे साईसदान होते हुए भी कंवारी के लड़का होना मान रहे हैं। (यह हजरत ईसा की तरफ महाराज का इशारा था।) इस पर सब अंग्रेज अफसरान की तेवरियां चढ़ गई लेकिन वे चुपचाप व्याख्यान सुनते रहे। दूसरे दिन अंग्रेज कमिश्नर ने खजांची साहब को जिनके बंगले में स्वामी जी उतरे हुए थे, बुलाकर कहा कि वह स्वामी जी को ऐसा तीखा खण्डन करने से मना करे, खजांची जी विचारे गये तो सही लेकिन महाराज को अच्छी तरह कह न सके। इस पर भी महाराज समझ गये। दूसरे दिन आत्मा के अमर पर व्याख्यान दिया, सब अंग्रेज अफसर आए हुए थे तो महाराज ने व्याख्यान में गर्जदार आवाज में कहा-कि लोग कहते हैं सत्य को प्रकट न करो, कलक्टर क्रोधित होगा, कमिश्नर अप्रसन्न होगा, गवर्नर पीड़ा देगा, यदि चक्रवर्ती राजा क्यों न अप्रसन्न हों, हम तो सत्य ही कहेंगे। फिर कहा कि जब तक कोई ऐसा [illegible] हनन कर सकता हो, तब तक मैं सत्य को प्रकट करने से कभी पृथक् नहीं रह सकता। महर्षि के ऐसे सत्य प्रेम को देखकर अंग्रेज अफसरों ने मुंह में उंगलियां डाल लीं और फिर किसी को महाराज के व्याख्यानों पर एतराज करने की जुर्रत न हो सकी।

भीम

युधिष्ठिर के छोटे भाई भीम का कद काठ बड़ा था, वह विशालकाय था। इसके कद्दावर और बड़े डीलडौल के होने से ही इसका नाम भीम था, क्योंकि भीम शब्द का अर्थ है विशालकाय कि जिसको देख कर डर लगे, उसको भीम कहा जाता है।

और

सन् 1871 में महर्षि मिर्जापुर पधारे और सेठ रतनलाल चड्ढा के बाग में ठहरे। गगा तट पर जाने का मार्ग मिस्टर सी बोल्ड एक अंग्रेज के लाख बनाने वाले कारखाने के नीचे होकर था। एक दिन रात्रि के समय ऐसा हुआ कि मिस्टरसी बोल्ड के चौकीदार ने स्वामी जी को कारखाने के नीचे से हो कर जाते हुए देखा। अन्धेरे में वह एक विशालकाय मनुष्य को कारखाने के पास देखकर डर गया। उसने मिस्टरसी बोल्ड से जाकर कहा कि कोई बड़ा

लम्बा चौड़ा आदमी कारखाने के पास है। वह लालटेन लेकर साथ आये तो उसने देखा स्वामी जी हैं। उसने चौकीदार को कह दिया कि यह चाहे जिस समय आवें इनको मत रोको। इस तरह विशालकाय होने से भीम और महर्षि दयानन्द में समानता है।

अर्जुन

जब पाण्डवों का वनवास समाप्त होने के करीब पहुंचा तो अर्जुन इस भाव से कि शायद अपना हक लेने के लिए युद्ध ही करना पड़े, कुछ दिनों के लिए अपने भाइयों से अलग होकर एक निर्जन वन में अस्त्र-शस्त्र विद्या का अभ्यास करने चले गये। और वहीं एक झोंपड़ी बना कर रहने लगे। एक शाम को जब वह अपनी कुटिया में बैठे थे तो एक अत्यन्त सुन्दर युवती हार शिंगार लगाकर, इनकी कुटिया में दाखिल होकर इनके सम्मुख बैठ गई। अर्जुन के पूछने पर इस अप्सराने कहा कि मैं आप जैसा पुत्र उत्पन्न करने के लिए अपनी कामना पूरी करने आई हूं। और मुझे विश्वास है कि आप मुझे निराश नहीं करेंगे। अर्जुन ने कहा देवी हो सकता है कि मेरे जैसा पुत्र उत्पन्न न हो सके, इसलिए आज से तू मेरी माता है मुझ को ही तू अपना पुत्र मान ले। इस पर वह अप्सरा उठ कर चली गई। और –

महर्षि दयानन्द जी जब मथुरा में विराजमान थे, तो सब पण्डित इनके सामने शास्त्रार्थ के लिए अपने आप को असमर्थ पाते थे। तब महर्षि को कलंक लगाने की नीयत से मथुरा के पण्डितों ने एक नवयुवती वैश्या को 500) रूपया लालच देकर महर्षि के पास भेजने के लिए तैयार कर दिया। वह युवती भी हार शिंगार लगा कर महर्षि की कुटिया में पहुंच गई। महर्षि उस समय समाधि अवस्था में थे, समाधि खुली तो उनहोंने अपने सामने बैठी इस सुन्दर युवती से आने का कारण पूछा। तब उस युवती ने भी वही बात कही कि मैं आप जैसे पुत्र लेने की कामना से आपके पास आई हूं। तब महर्षि जी ने भी अर्जुन की तरह जवाब दिया कि देवी आज से तू मेरी माता हुई और मुझको अपना पुत्र समझ ले। महर्षि के यह वचन सुनकर इस दुष्टा का चित्त पिघल उठा। उसके सब पाप आंसू बन कर आंखों की राह से बह गये। और आयन्दा के लिए सचमुच वह देवी बन गई परन्तु जो पण्डित कुटिया के बाहर इस प्रतीक्षा में लाठियां लिये खड़े हुए थे, कि अन्दर से जरा इस वैष्या की आवाज निकले और हम हमला करके महर्षि के महत्त्व का सर्वनाश कर दें। विचारे निराश होकर चले गये।

आज कार्य की संभाल है, कल कार्य का काल है

आचार्य चन्द्रशेखर शास्त्री, दिल्ली

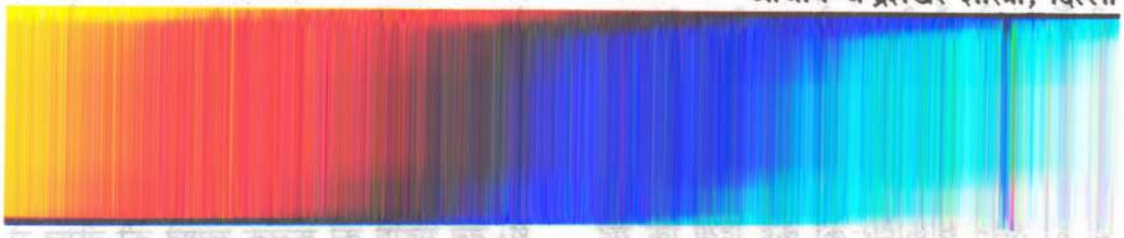

कल या काल यह शब्द कोई अनजाना नहीं है। कुछ लोग समय होता है तब सोचते नहीं हैं, जब सोचते है तब समय निकल चुका होता है। जिन्दगी आधे बीत चुकी होती है, तब हम सोचते हैं कि जिन्दगी क्या है? इसलिए मनुष्य को चाहिये कि वे समय रहते रहते सोच ले, मैं कौन हूँ ? कहां से आया हूँ ? जाना चाहिए किधर, जा रहा हूँ किध? जीवन क्षणिक है। कार्य बहुत है और समय भागता जा रहा है।

यावत् स्वस्थो ह्ययं देहो, यावत् मृत्युश्च दूरतः।
तावदात्महितं कुर्यात् प्राणान्ते किं करिष्यति॥
अनित्यानि शरीराणि विभवो नैव शाश्वतः।
नित्यं सन्निहितो मृत्यु कर्तव्यो धर्म संग्रहः॥

अर्थात् जब तक यह शरीर स्वस्थ बना हुआ है, जब तक बुढ़ापा नहीं आया तभी तक आत्मश्रेयस के कुछ कार्य कर डालो। प्राणान्त होने पर क्या कर सकोगे? शरीर नश्वर है, वैभव अस्थायी है, मृत्यु सदा समीप है। अतः शीघ्र ही धर्म, सत्कर्म में लग जाओ।

फ्रैंकलिन ने कहा है- Life is short art is long and time is fleeting.

अर्थात् समय को बरबाद न करो, क्योंकि जीवन इसी से बना है। प्रकृति का यह नियम है। पहले तुम लो फिर मैं लूंगा। यानि पहले हम समय को अपने अनुसार उपयोग करते हैं। अब यहां देखना है कि आप उसका किन प्रकार सदुपयोग करते है।

गाफिल तुझे घड़ियाल यह देता है मुनादी।
गरदूं ने घड़ी उम्र की और घटा दी॥

हर वर्ष बड़े उल्लास पूर्वक अपना जन्म दिवस मनाते हैं। मनाना भी चाहिए। परन्तु यह भी नहीं भूलना चाहिए कि उम्र से एक वर्ष और घट गया है जो इस बात को समझता है वह दुःखी नहीं रहता ।

बहुत गई थोड़ी रही मनुवा अब तो चेत।
काल चिड़िया चुग रहीं निशिदिन आयु खेत।
जितनी बड़ती है उतनी घटती है।
जिन्दगी आप हीआप कटती है॥

जो काम कल करना है उसे आज ही करले। अविद्या की गहरी निद्रा से तू अब शीघ्र ही जाग जा और अपने काम पूर्ण कर। पता नहीं यह अमूल्य मानव तन फिर मिलेगा या नहीं।

आज हम केवल अपने परिवार तक सीमित रह गये है। उसे ही अपनी जिन्दगी मान कर जी रहे है। परन्तु यह बहुत बड़ी भ्रान्ति है। प्रभु ने मनुष्य को दिव्य बुद्धि दी है जिससे मनुष्य विवेक पूर्वक धर्म अर्थ मोक्ष को प्राप्त कर सके।

मानव का उद्देश्य नहीं है केवल खाना पीना।
मानव का उद्देश्य है जग में जगना और जगाना।
आरोहणामाक्रमणं जीवतो जीवतो ऽयनम।

उन्नत होना और आगे बढ़ना प्रत्येक जीव का लक्ष्य है। 4344 मनुष्य के जीवन का काफी समय सोने एवं खाने में ही बीत जाता हैं बचपन खेल कूद में, जवानी भोग विलास और दुनियादारी में बीत जाता है। जब बुढ़ापा आता है तब कुछ बीमारियो में या फिर गृहस्थ की मोहमाया में ही गुजर जाता है।

गुजरा हुआ समय और कह गये वाक्य कभी वापिस नहीं आते। समय को जीवन में प्राणकी तरह अति मूल्यवान मानना चाहिए। हमारा प्रयास यह होना चाहिए की श्रेष्ठ कार्य को करने में विलम्ब न करे। हम ऐसा कार्य करें जो निःस्वार्थ, त्याग, सहनशीलता, तथा विवेक से परिपूर्ण हो। तभी हमारा जीवन सार्थक होगा।

हमेशा के लिए रहना नहीं इस दारे फानी मे।
कुछ अच्छे काम कर लो चार दिन की
जिन्दगानी में।

भर्त्तृहरि कहते है—

भोगा ने भुक्ता वयमेव भुक्ताः तपो न तप्ता
वयमेव तप्ताः।
कालो न याता वयमेव यातास्तृष्णा न जीर्णा
वयमेव जीर्णा।

भोग समाप्त नहीं होते है अपितु जीवन समाप्त हो जाता है। हमारे जीवन में कितने ही उदाहरण है और रोज ही ये घटनाएं सुनते और देखते हैं। जैसे एक डाक्टर ने विनोबाजी का हाल ऐसा और कहा आप अपने शरीर का पूर्ण ध्यान रखें वरना मृत्यु जल्दी आ जायेगी। परन्तु उस डॉक्टर को क्या मालूम आज ही मृत्यु उसे अपनी गोद में लेने वाली है। डॉक्टर घर गए प[illegible] साथ बैठे थे बैठे ही प्राण पर वे उड़ गय। विनोबा जी इसके बाद भी 5 वर्ष तक जीवित रहे।

ऐ मानव ! कल किसने देखा है? एक छोटा सा बच्चा इम्तिहान देंने कि लिए जाता है तब उसे तीन घंटे मिलते है पर मौत जबआती है तब 3 मिनट का भी इंतजार नहीं करती।

सदा समुद्यत कर्मशील संकल्पशील मानव परीक्षा देता है, प्रतीक्षा नहीं करता। शरीर एक कार्यसिद्धि की कल है जिसे कल नहीं पड़ती, क्या पता, कब यह कल काल के हाथ लग जाये। अहंकार रूपी राक्षस का नाश करने के लिए पन्द्रह पुष्प है,

सच बोलो, ओ३म नाम लो, तजो कपट व्यवहार।
सब प्रकार हिंसा तजो, करो अतिथि सत्कार।।
वस्तु परिग्रह मत करो, दृढ़ धारोवैराग।
ब्रह्मचर्य पालन करो, परधन को दो त्याग।।
प्रेम करो सबसे सदा, सदा करो सत्संग।
वृद्धों की सेवा करो, कभी न बदलो रंग।।
क्षमा करो अपराध को, दोष न देखो भूल।
हरि सेवा में अर्पित है, ये ही पन्द्रह फूल।।

बहारे दुनियां है चंद रोजा
न चल यहां सर उठा के
खुदा ने ऐसे हजारों नक्शे
बिगाड़ डाले बना बना के।

मोबाइल में बैटरी : शरीर में चेतना
(Consciousness)

प्रिय पुत्र एवं पुत्री,

शुभाशीष !

पिछले पत्र को पढ़कर इन आँखों द्वारा अदृश्य शरीर यानि सूक्ष्म शरीर के महत्त्व को बहुत दृढ़ता से स्वीकार करते हुए कहा था कि निश्चित रूप से सिम कार्ड के समान यह हमारे जीवन का बहुत महत्त्वपूर्ण पक्ष है। हमारे जीवन के सभी कार्य इन मन, बुद्धि आदि के आधार पर ही तो चलते हैं। यदि ये न हों तो हमारे लिए कोई भी कार्य करना सम्भव नहीं होगा, क्योंकि सब कुछ भूलते जाने के कारण हम कुछ कर ही नहीं पायेंगे और न ही अच्छे बुरे का विवेक यानि निर्णय ही कर सकेंगे । इसके आगे आपने बहुत उत्सुकता से सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण पक्ष को जानने की इच्छा भी प्रकट की है। आपने बताया है कि आपके मित्र भी इन पत्रों को बहुत रुचि से पढ़ रहे हैं। बहुत अच्छी बात है कि आपके मित्र भी इन पत्रों को बहुत रुचि से पढ़ रहे हैं। बहुत अच्छी बात है। यदि उन्हें किसी प्रकार की शंका, होगी, तो हम उस पर भी अवश्य चर्चा करेंगे ।

बच्चो, सूक्ष्म शरीर के महत्त्व को मैंने बहुत ही संक्षेप में सांकेतिक रूप से ही प्रकट किया था। ज्यों-ज्यों आप इस पर चिन्तन करेंगे, इसके महत्त्व को और अधिक समझेंगे। वस्तुतः हमारे अच्छे-बुरे जीवन का ढाँचा इस शरीर में feed किये हुए संस्कारों, विचारों आदि की नींव पर ही खड़ा होता है और उसके अनुसार ही हम आगे बढ़ते हैं। मन, बुद्धि के अतिरिक्त एक अन्य तत्त्व अहंकार भी इसी सूक्ष्म शरीर का अंग है। इसी के आधार पर हम अपनी (individuality की) पहचान कर पाते हैं। विषय अधिक जटिल (complicated) न हो जाए, इसलिए इसका विस्तार से वर्णन नहीं किया जा रहा।

अब हम तीसरे पक्ष **बैटरी** को लेते हैं। आप भली प्रकार जानते हैं कि मोबाइल उपकरण के अन्दर सिम कार्ड के अलावा बैटरी भी होती है, जो हमें बाहर से दिखाई नहीं देती। परन्तु इस बैटरी के बिना न तो उपकरण काम कर सकता है और न हीं सिम कार्ड। दोनों ही व्यर्थ हैं अर्थात् मृत के समान हैं। वास्तव में दिखाई देने वाली बैटरी स्वयं नहीं, अपितु उसके अन्दर की ऊर्जा (जो दिखाई नहीं देती) ही दोनों को कार्य करने के योग्य बनाती है। इस ऊर्जा को प्राप्त करने के लिए बैटरी को चार्ज

करना पड़ता है। बिना चार्ज किये यह उपकरण काम कर ही नहीं सकता। ठीक इसी प्रकार, हमारे इस दिखाई देने वाले स्थूल और न दिखाई देने वाले सूक्ष्म शरीर के अलावा बैटरी के समान एक अन्य तत्त्व भी होता है, जिसे हम आत्मा कहते हैं। यदि यह आत्मा न हो, तो शरीर को मृत कह दिया जाता है। यह एक प्रकार की चेतन ऊर्जा है, जो दिखाई नहीं देती। दूसरे शब्दों में कहें तो इसके बिना बाहर और अन्दर का शरीर व्यर्थ हो जाता है। आप लोगों को याद हो, तो इसके बारे में पहले भी पत्र सं.-2 में संक्षेप में चर्चा की गई थी। यहाँ इतना जान लो कि इस आत्मा का शरीर में वही योगदान है, जो मोबाइल में बैटरी का।

बैटरी और आत्मा में अन्तर है यह कि **बैटरी जड़ है** और इसका निर्माण मनुष्य स्वयं करता है, जबकि **शरीर की बैटरी आत्मा चेतन तत्त्व है** और इसका निर्माण कोई नहीं करता, न मनुष्य और न ही ईश्वर। यह सदा से अपने आप ही बना रहता है।

इस प्रकार, **मोबाइल का उपकरण, सिम कार्ड** और **बैटरी**- इन तीनों के संयोग से ही यह यन्त्र व्यर्थ है। परन्तु ये तीनों ही जड़ (inaninate) होने से इनमें से कोई भी स्वयं इसका प्रयोग नहीं कर सकता। इसका लाभ उठाने के लिए चेतन प्रांणी अर्थात् मनुष्य की आवश्यकता रहती है। इस यन्त्र का स्वामी मनुष्य अपनी इच्छा से जो नम्बर मिलाना चाहे अथवा feed किया data निकालना चाहे, निकाल सकता है। इसके विपरीत, चेतन होने के कारण आत्मा रूपी बैटरी स्वयं ही स्थूल और उन्हें क्रियाशील भी बनाती है। अर्थात् आत्मा की इच्छा और निर्देश से ही मन, बुद्धि आदि अपने कार्य करते हैं। और मन, बुद्धि के निर्देश से आँख, कान, हाथ, पैर आदि बाहरी इन्द्रियाँ अपने-अपने काम करती हैं। इस प्रकार, आत्मा का महत्व सबसे अधिक है। दूसरे शब्दों में कहें तो आत्मा के लिए ही सूक्ष्म और स्थूल शरीरों का निर्माण हुआ है। ये दोनों शरीर आत्मा के लिए उपकरण मात्र हैं अर्थात् आत्मा की इच्छा पूर्ति के साधन हैं। इन्हीं उपकरणों के द्वारा ही आत्मा सुख और दुःख का उपभोग करती है। तथा सूक्ष्म शरीर में पहले से संचित संस्कारों के आधार पर अपनी रुचि और इच्छा के अनुसार नये कर्म भी करती है। फिर इन्हीं कर्मों के आधार पर ही वह नया जन्म प्राप्त करती हैं इस प्रकार, **आत्मा मालिक है, तो ये दोनों प्रकार के शरीर उसके नौकर।** मालिक की इच्छा और प्रेरणा से ही ये दोनों शरीर कार्य करते व ज्ञान प्राप्त करते हैं। यह मालिक तो सदा बना रहता है, पर इसके नौकर बदलते रहते हैं।

बच्चो, आपको पिछले पत्र में बताया गया

था और आप स्वयं भी जानते हैं कि स्थूल (बाहर के) शरीर के कार्य करने की सीमा कुछ [illegible] वर्षों के पश्चात् समाप्त हो जाता है। क्योंकि निश्चित रूप से एक समय आता है जब आत्मा इस शरीर को छोड़कर निकल जाती है और यह शरीर व्यर्थ हो जाता है। तब इसे जलाना या दफनाना पड़ता है। परन्तु सूक्ष्म शरीर (मन, बुद्धि, अहंकार) आत्मा के साथ निकल जाता है और तब तक बना रहता है, जब तक वह मोक्ष प्राप्त न कर ले या जगत् की प्रलय अवस्था न आ जाए। परन्तु है यह भी जड़ ही, चेतन केवल आत्मा है।

जिस प्रकार, एक स्थान से दूसरे स्थान पर आने-जाने के लिए हम मोटर, कार या अन्य वाहनों का प्रयोग करते हैं, उसी प्रकार यह शरीर भी आत्मा का वाहन है। इसी की सहायता से आत्मा भी उसी प्रकार कोई कार्य नहीं कर सकती, जिस प्रकार मनुष्य कार, बस आदि वाहन के बिना लम्बी यात्रा नहीं कर सकता। इसी तरह, मन, बुद्धि आदि अन्तःकरण के बिना भी आत्मा कोई ज्ञान प्राप्त नहीं कर सकती। इस प्रकार, ये दोनों शरीर और आत्मा आपस में मिलकर ही जीवन चलाने में समर्थ हैं। परन्तु हम सूक्ष्म शरीर और आत्मा को भूलकर केवल बाहरी शरीर को ही सब कुछ समझ लेते हैं और उसी की सुरक्षा और पालन-पोषण में लगे रहते हैं। हम यह नहीं समझ पाते कि इसका मूल्य केवल आत्मा के कारण ही है। क्योंकि जब तक आत्मा शरीर में रहती है तभी तक आँखें देख [illegible] सकती है, हाथ-पैर काम कर सकते हैं, बुद्धि निर्णय कर सकती है वह हमारी स्मृति बनी रहती है। जैसे ही यह शरीर से बाहर निकल जाती है, शरीर मिट्टी के ढेले के समान बेकार हो जाता है। परन्तु हम इस असली तत्त्व के महत्त्व को तो क्या सत्ता क्या सत्ता को भी स्वीकार नहीं कर पाते। तभी तो हम आत्मा की उन्नति के लिए न कुछ सोचते हैं और न ही कुछ करते हैं। हमारा अधिकांश जीवन उसी शरीर को सुखी बनाने में बीत जाता है, जो अन्ततः नष्ट ही हो जाने वाला है।

परन्तु इसका यह तात्पर्य कदापि मत समझना कि शरीर को व्यर्थ समझकर इसकी उपेक्षा कर दें। इससे पहले तुम्हें यह बता चुकी हूँ इस शरीर के बिना आत्मा भी कोई कार्य नहीं कर सकती। अतः हमें अपने जीवन के तीनों पक्षों- **स्थूल शरीर, सूक्ष्म शरीर** और **आत्मा**- का उचित मुल्यांकन करते हुए ही सन्तुलित जीवन व्यतीत करना चाहिए। शरीर के लिए तो प्रायः सभी तरह-तरह के साधन जुटाने में लगे रहते हैं, परन्तु इसके मालिक आत्मा एवं नींव रूप संस्कारों और विचारों की पूरी तरह अवहेलना कर देते हैं। **शेष पेज 20 पर...**

आर्यसमाज और विश्व बन्धुत्व

आचार्य- चन्द्रशेखर शास्त्री, नई दि

धरती का कोई खण्ड नदी पर्वत समतल आदि का संघात कहा जा सकता है। मनुष्यों की आकस्मिक रूप से एकत्रित भीड मानव समूह की संज्ञा पा सकती है। परन्तु राष्ट्र की गरिमा पाने के लिए भूमिखण्ड विशेष की ही नहीं एक सांस्कृति दायभाग के अधिकारी और प्रबुद्ध मानव की आवश्यकता होती है, जो अपने अनुराग के दीप्ति से उस भूमि के हर कठ्ठा को इस प्रकार उद्‌भासित कर दे वह एक चिर नवीन सौन्दर्य में जीवित और लयवान हो सके-संस्कृति के स्वर

परमात्मा हमें कठोर परीक्षण में डालते हैं, साधारण मानव की दृष्टि में परीक्षण की यह घड़ी उसे विचलित कर देती है, यंत्रणाओं द्वारा जब दलन होता है तब आस्थाओं का स्खलन होता है। साधारण मानव यह मान लेता है कि नियति ने उस पर अकारण दी क्रोध किया है।

इस भावना से उसका मन मलिन हो जाता है, वो मानव के कल्याण की भावना को ताक में रखकर उसको संहार पर उताक हो जाता है, ये नकारात्मक विचार है, जो विश्व बन्धुत्व के उज्जवल भाव पर एक बड़ा आघात है, हमारे जन ईश्वर की न्याय व्यवस्था में पूरी आस्था रखते हुए उससे प्रार्थना करते ह कि प्रथम तो हमारे मनों में द्वेष भावना न हो, यदि कहीं रंचमात्र ऐसा हो, तब हम यह प्रार्थना नहीं करते कि किसी व्यक्ति को ठिकाने लगा दें किंतु विनम्र भाव से कहते हैं स्वामी यह आपके न्याय हस्ते हैं,

संसार में जितने भी मत है, उनमें एकपक्षीय भावना है उनके पंथ के प्रचार के निमित किसी न किसी व्यक्ति का नाम लिया जाता है जो उसका प्रवर्त्तक माना जाता है। सर्वविदित है कि मानव का ज्ञान स्वल्प है उसके चिन्तन की सीमा है उसे वह दृष्टि नहीं मिलती जो ईश्वर को और उसके सृष्टि को समग्रता में देख सके, वेद का जहाँ तक प्रश्न है किसी व्यक्ति विशेष से वह जुड़ा हुआ नहीं है, आस्तिक आर्यो का यह विश्वास है, कि वेद परमात्मा का ज्ञान है, अन्य मतावलम्बियों ने पन्थाई के सूत्रधारों को आगे रखकर ऐसा लगता है, कि उनके गुणों का व्यक्तिरूप में गान किया है और यंत्र-तंत्र उनमें मानवकल्याण का भाव दृष्टिगोचर होता है तो वह भी गौण रूप में है। परन्तु वेद में जो संदेश है वा किसी काल और प्रदेश के आधीन नहीं है, वह सार्वभौम और

सार्वकालिक है आर्यसमाज के संस्थापक महर्षि दयानन्द ने आर्य समाज का प्रथम नियम बनाकर

जहाँ तक ज्ञान के आदि स्त्रोत होने का प्रश्न है, ईश्वर के वर्चस्व को अकाट्य रूप से प्रतिष्ठित किया है।

उन्होंने लिखा है सब सत्य विद्या और जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं उन सबका आदि मूल परमेश्वर है।

ये नियम इस बात का ज्वलन्त प्रमाण है कि ऋषि को गुरूडम से कितनी घृणा थी और हमारे सम्मति से ये नियम गुरूडम के नीत पर प्रवलम आघात है।

हमारे विचार में धर्म कोई कर्मकाण्ड नहीं, मानव का दूसरे मानव के प्रति व्यवहार है, हम सभी को मित्र की दृष्टि से देखते हैं, और चाहते है कि हमारे मन शुभ संकल्प वाले हों, सभी के कल्याण की कामना करते हैं, किसी के प्रति मालिन्य अथवा द्वेष को कहीं पर भी प्रश्रय नहीं देते।

हमारा धर्म वो कर्म है जो अपने को अपने मर्म को हमारी उपलब्धियों के रूप में औरों तक पहुँचाता है।

विश्वबन्धुत्व का ये आधार है कि हम एक ईश्वर की सन्तान है हम कहीं के रहने वाले हों, अपने व्यक्तिगत आवश्यकताओं को देखते हुए हम किसी भी राज्यतन्त्र को अपनाये परन्तु वेद के इस संदेश को कभी न भूलें कि हम प्रभु के अमृत

पुत्र है। हमारी बोलचाल की भाषा कोई भी हो परन्तु हम यह पाते कि उल्लास हर्ष, विसाद और विस्मय आदि अनुभूतियों की भाषा मानव कहीं भी हो वो भाषा प्रत्येक मानव समझता है।

विश्वबन्धुत्व के प्रति हम कितने प्रतिबद्ध है इसका पता तभी चल पायेगा जब हम इस भाषा के प्रति संवेदनशील होंगे और अपना सौभाग्य सेवा के उस अवसर की प्राप्ति में मानेंगे जब हम विश्व के कल्याण के प्रति अपना थोड़ा सा योग दें।

हमारे मनीषियों ने विश्व बन्धुत्व की मूलभावना को इस रूप में बड़ी सुन्दर अभिव्यक्ति दी है–

नत्वाहं कामये राज्यं न सौख्यं न पुनश्विम्।
कामये दुःखतप्तानां, प्राणिनामार्त्तनाशनम्

आर्यसमाज का संदेश है कि आज प्रत्येक व्यक्ति अपने वृत्ति के प्रति ईमानदार रहे, और अपने कार्यों से लोगों पर ऐसा प्रभाव डाले कि वह एक उदाहरण बन जाये।

वर्ण से यहाँ अभिप्राय जाति से नहीं, वृत्ति से है, वर्ण अक्षर भी है जो कभी नष्ट नहीं होता, इसी प्रकार मानव दूसरों के हृदय पर अपने कार्यों का ऐसा प्रभाव डाले कि उसे किसी स्थिति में लज्जित नहीं होना पड़े। वर्ण रंग को कहते हैं, जब

किसी के मन पर किसी व्यक्ति की ऐसी छवि होगी तो कौन कह सकता कि उसने अपने रंग की छाप नहीं छोड़ी, वह भी ऐसी जो कभी मिट नहीं सकेगी, न कभी धुल सकेगी।

आज जरूरत इस बात की है कि आर्यसमाज मात्र संस्था न रहकर एक जीवन्त आन्दोलन बने, जो जागरण का पुरोधा बनकर जनमानस को आन्दोलित करे, आर्यसमाज जनता को इसकी प्रतीति कराई जाये कि आर्य किसी जाति का नाम नहीं है, वरन आर्य संज्ञा है उस व्यक्ति की जो सेवावृत्ति, धर्म परायण, शुभगुणयुक्ता हो।

विश्वबन्धुत्व की भावना का प्रचार करने के लिए यह आवश्क है कि जातिवाद, वर्गवाद और प्रदेशवाद की संकीर्णता से हम उबरे और सभी को यह स्मरण रखने की प्रेरणा दे, वह स्वयं आर्य बनें और अन्यों को बनाये। तथा मर्नुभव: जन्या दैव्यं जनम् इस वेदोपदेश का प्रचार-प्रसार करे।

नशा उन्मूलन अभियान और शाकाहार का प्रचार किया जाय।

वैदिक साहित्य का एक व्यापक स्तर पर वितरण किया जो वैदिक विचार धारा के प्रचार का विश्वस्त आधार बन सके।

बिक्रम सम्मत 2014 चैत प्रतिपदा सहोल्लास मनाया गया।

जिला आर्य सभा आरा के तत्वधान में बिक्रम सम्मत 2014 का प्रारंभ दिनांक 31/03/2014 सोमवार को पुरे जिला के आर्य समाजों में एवम् धार्मिक स्थलों पर बिक्रम सम्मत 2014 को स्वागत यज्ञ हवन एवं विद्वानों का प्रवचन के माध्यम से मनाया गया।

इस पुन्य अवसर पर भोजपुर जिला के जीतौरा बाजार पर दानी द्वारा दिया दान की जमीन पर आर्यसमाज का भूमि पुजनशाला निर्माण का आधार शिला कामता प्रसाद प्रधान आर्य समाज, आरा, पुरोहित ने सनातन संस्कृति के अनुसार भूमि पुजन हुआ। और ओ३म् ध्वज फहराया गया।

भूमि पुजन का मुख्य यजमान श्री प्रभात कुमार सम्पन्न के साथयज्ञ हवन के साथ प्रवचन दिये की जीतौरा ग्रामीणों के सहयोग से एक साल के अन्दर यज्ञ शाला का भवन तैयार कर देंगे।

इस कार्य के पूर्ण करने के लिये सहयोगी नव जलान श्री मनोज कुमार, अविनाश कुमार, धिरज कुमार, प्रकाश कुमार बगैरह ने वचनबद्ध हुये।

गुरु का वरण

- प्रो० उमाकान्त उपाध्याय, कोलकाता

अज्ञान तिमिरान्धस्य ज्ञानाञ्जन शलाकया,
चक्षुरून्मीलितं येन तस्मैं श्रीगुरूवे नमः

भारतवर्ष की महिमामयी संस्कृति में, ऋषियों की परंपरा में तीन गुरु माने जाते हैं, ''शतपथ ब्राह्मण'' में कहा गया है, ''मातृमान् पितृमान् आचार्यवान् पुरुषों वेद'', मनुष्य का प्रथम गुरु माता है, द्वितीय गुरु पिता हैं और तृतीय गुरु आचार्य हैं। माता-पिता का चुनाव संतान के वश में नहीं होता है, सन्तान का चुनाव भी माता-पिता के वश में नहीं होता। किस माता पिता को कौन सी व्यवस्था से जीवों के कर्मानुसार होता है। संसार में बिना गुरु के, गुरु-विहीन व्यक्ति तो होते हैं किन्तु बिना माता-पिता के कोई प्राणधारी नहीं होता। अतः मातृमान् और पितृमान् का ऋषियों ने अर्थ बताया है कि वस्तुतः वह संतान वास्तव में माता-पिता वाली है जिसके माता-पिता धार्मिक, विद्वान और मानवता के प्रशंसनीय गुणों से युक्त हों। सो माता-पिता का वरण नहीं किया जाता, वे जीव के कर्मानुसार परमेश्वर की व्यवस्था से प्राप्त होते है।

गुरु या आचार्य का चयन या वरण किया जाता है। शिष्य का भी वरण या चयन किया जाता है। न सभी को गुरु बनाया जाता है और न सभी को शिष्य बनाया जाता है। वेद में एक मन्त्र आता है जिसमे गुरु आचार्य के गुणों की व्याख्या है-

''सं पूषन् विदुषा नय, यो अञ्जसानुशासति
य एवद मिति ब्रवत् ''ऋग्० 6-54-1

इस मन्त्र में विद्यार्थी पूषन् परमेश्वर से प्रार्थना करता है। उषादेव पुश्तिदाता परमेश्वर है। पोषण शरीर का तो होता ही है, मन, बुद्धि और चित्त का भी होता है। सामाजिक समरसता, सामंजस्य का भी होता है। गुरूदेव तो मन, मस्तिष्क, बुद्धि, चित्त, चरित्र, आचरण, सबका पोषण करने वाले होते है। अतः मन्त्र में यह भाव है की गुरूदेव के पास विद्या की प्राप्ति के लिए, ज्ञान की उपलब्धि के लिये हमारे शरीर, अन्नमय कोष, प्राणमय कोष और मनोमय कोष का सब प्रकार से पोषण होता रहे। मन्त्र में परमेश्वर से प्रार्थना यह की गयी है कि हे पूषन् देव! हमें ऐसे विद्वान् गुरू के पास पहुंचाइए जो - यः अञ्जसा अनुशासति (अनुशास्ति)- जिसकी अध्यापन करने की विधि में सरलता, शीघ्रता हो, शिष्य सरलता से हृदयंगम कर सकें। कई व्यक्ति स्वयं तो

विद्वान् हैं, किन्तु उनमें शिष्यों द्वारा ग्राहय अध्यापन कला नहीं होती। अध्यापन में संप्रेषणीयता, ज्ञान-दान की कला होनी चाहिए। मन्त्र का तीसरा खंड है- ये एवेदमिति ब्रवत्- इसका अभिप्राय यह है कि अध्यापक को यह निश्चयात्मक ज्ञान हो कि यह विषय, ज्ञान इतना ही है। ज्ञान का प्रथम पक्ष है सिद्धांत (Theory) और दूसरा पक्ष व्यवहार और प्रयोग (Practice and Working) विषय का सैद्धांतिक ज्ञान अधूरा है जब तक उसका जीवन में प्रयोग, व्यवहार न समझ में आ जाये। विद्या की वास्तविक उपयोगिता व्यवहार और प्रयोग ही है।

मन्त्र का एक बहुत महत्वपूर्ण अंश है कि "हे पूषन् देव, पोषण करने वाले प्रभु, हमें विदुषानय, हमें विद्वान, सुविज्ञ गुरू के पास पहुंचिय। विद्या का अद्दन-प्रदान तभी संभव हो सकेगा जब गुरु और शिष्य एकत्र, एक जगह इकट्ठे हो। गुरु शिष्य के एकत्र होने की दो विधियां समझ में आती है। एक है कि शिष्य गुरु के चरणों में श्रद्धा-पूर्वक स्वयं उपस्थित हो। गीता में श्रीकृष्ण कहते हैं -'**श्रद्धावान् लभते ज्ञानम्, तत्परः संयतेन्द्रियः**" (गीता 4-39)। इसका अभिप्राय यह है कि ज्ञान प्राप्त करने के लिए तीन आवश्यक शर्त है। पहली शर्त यह है कि शिष्य में श्रद्धा हो। विद्या प्राप्ति के प्रति श्रद्धा हो और गुरु के ज्ञान, जीवन और चरित्र के प्रति श्रद्धा हो। दूसरी शर्त यह कि शिष्य विद्या प्राप्ति के लिये तत्पर हो। शिष्य का उद्देश्य विद्या-प्राप्ति हो। ज्ञान-प्राप्ति की तीसरी शर्त है कि विद्यार्थी के जीवन में भोग-विलास के प्रति संयम हो, शिष्य विलासी न हो और तपस्वी हो। साथ ही हमारे जीवन में भोग-इन्द्रियों पर नियंत्रण हो। हम जिहवा से स्वाद का भोग करते हैं। नाक से सुगंध का, कान से शब्द का, आँख से सुन्दर रूप का और त्वचा से स्पर्श का भोग करते हैं। शिष्य भोगी-विलासी न हो, जीवन में संयम हो, तभी ज्ञान प्राप्त कर सकेगा। शिष्य को सुपात्र, श्रद्धावान और संयमी होना आवश्यक है। एक बड़ी प्रसिद्ध कहावत है-

फूलहिं फलहिं न बेत, जदपि सुधा बरसहिं जल्द।
मूरख हृदय न चेत, जौगुरु मिलै बिरंची सम।

गीता में कहा गया है- **'उपदेक्ष्यन्ति ते ज्ञानं ग्यानिनस्तत्व दर्शिनः'** (गी० 4-34) अर्थात् तत्वदर्शी गुरु लोग ज्ञान का उपेदश देंगे और अध्यापन कला में निपुण गुरु लोग शिष्य के हृदय में ज्ञान को पहुंचा भी देंगे किन्तु शिष्य के लिए आवश्यक है- तं विद्धि प्रणिपातेन परिप्रश्नेन सेवया' (गी० 4-39) अर्थात् शिष्य

को उचित है कि वह गुरु के प्रति श्रद्धापूर्वक प्रणाम अर्पित करे, फिर बड़ी नम्रता से गुरु से [illegible] प्रश्न भी कर, अपनी जिज्ञासाओं का समाधान करवा लें और साथ ही गुरु के प्रति सेवा शुश्रुषा (श्रोतुमिच्छा) की भावना बनाये रखे।

हमने ऊपर यह लिखा था कि गुरु शिष्य के मिलन के, एकत्र होने के दो प्रकार है। अब तक हम प्रथम प्रकार की चर्चा कर रहे थे कि शिष्य गुरु के चरणों में श्रद्धा-पूर्वक उपस्थित हो। गुरु शिष्य के मिलन का दूसरा प्रकार है कि गुरु शिष्य के पास चढ़ाने के लिए जाये, यह ट्यूशन पद्धति है। आजकल तो ट्यूशन बहुत प्रचलित हो गया है। अध्यापक रूपयों के पीछे। शिष्यों के पास जाते रहते हैं। प्राचीन भारत में, जहाँ तक हम सोचते हैं। एक ही ट्यूटर, द्रोणाचार्य हुए थे। द्रोणाचार्य ही अपने निर्वाह के लिए भीष्म पितामह के पास पहुंचे थे। इस ट्यूशनी विद्या का बड़ा भरी दुष्परिणाम हुआ था। द्रोणाचार्य ने ''अर्थस्य पुरुषों दासः'' कहकर अपनी सफाई दी थी और महाभारत के युद्ध में जब तक भीष्म पितामह कौरवों के सेनापति बने रहे तब तक अधर्म युद्ध नहीं हुआ था। जब द्रोणाचार्य सेनापति बने तब ही अधर्म युद्ध आरम्भ हुआ था। द्रोणाचार्य ने द्दूयत-क्रीड़ा के समय, द्रौपदी के वस्त्र-हरण के समय और अत्यंत अन्याय-पूर्वक अभिमन्यु-वध के समय आदि अवसरों पर अन्याय का समर्थन किया [illegible] था। यह है गुरु का धन, आजीविका-लाभ में शिष्य के पास जाना। प्रस्तुत मन्त्र में संदेश है की शिष्य को गुरु के चरणों में उपस्थित होना चाहिए और गुरु के अनुशासन, नियंत्रण में विद्या ग्रहण करना चाहिए और अपने जीवन का निर्माण करना चाहिए।

पेज 14 का शेष....

शरीर की पुष्टि के साथ-साथ आत्मा और अच्छे विचारों का पोषण भी आवश्यक है। जिस प्रकार, यदि बैटरी को चार्ज नहीं करेंगे तो शरीर रूपी उपकरण और सूक्ष्म शरीर रूपी सिमकार्ड भी उचित दिशा में कार्य नहीं कर पायेंगे। **आत्मा को चार्ज करने के लिए इसे ईश्वर रूपी चार्जर से जोड़ना पड़ता है।** इससे इसमें नम्रता, ज्ञान, साहस, उत्साह, बल आदि दिव्य गुणों सत्ता को ही स्वीकार नहीं करते, तो उसको चार्ज करने का प्रयत्न कैसे करेंगे। ऐसी स्थिति में आत्मिक गुणों का उत्कर्ष ही नहीं होगा। अब ईश्वर का प्रसंग उपस्थित होने पर अगले पत्र में यही चर्चा कर लेते हैं कि आत्मा के चार्जर ईश्वर की सत्ता है भी या नहीं ?

तुम्हारी माता ।

ग्यानी पिण्डी दास जी

लेखक- अशोक आर्य, गाजियाबाद

ग्यानी पिण्डी दास जी अपने समय के आर्य समाज के अच्छे विद्वान में से एक थे। आप का जन्म रावलपिण्डी (वर्तमान पाकिस्तान) में दिनांक 22 अगस्त सन 1895 इस्वी में हुआ। रावलपिण्डी की प्रचलित प्रथा ने ही उन्हें पिण्डीदास नाम दिया। माता परमेश्वरी देवी तथा पिता पं सोहनलाल भारद्वाज की सुसंतान होने का आप को गौरव प्राप्त था, जो अंगिरस गैत्रीय ब्राह्मण थे।

इन दिनों पंजाब में सिक्ख सम्प्रदाय का अच्छा प्रभाव था तथा गुरद्वारों में भी शिक्षा देने की व्यवस्था थी, इन कारण आप की आरम्भिक शिक्षा गुरूमखी माध्यम से एक गुरूद्वारे में ही हुई। तत्पश्चात सन् 1901 में आप ने रावल्पिण्डी के स्कुल में प्रवेश लिया। आप ने खूब मन लगा कर शिक्षा पाने का प्रयास किया और आप ने सत्तम शिक्षा की परीक्षा उतर प्रदेश के एक मिशन स्कुल से उत्तीर्ण की। सप्तम शिक्षा के पश्चात् आप ने डी.ए.वी स्कुल में आकर प्रवेश लिया तथा यहां से नवम शिक्षा तक की शिक्षा प्राप्त की। इसके पश्चात आप अमृतसर के खाल्सा हाई स्कुल में गए तथा यहां से मैट्रिक की शिक्षा उत्तीर्ण की। पंजाब में उन दिनों भाषा की विशेष योग्यता के लिए कुछ परिक्षाएं हुआ करती थीं, यह परिक्षाएं आज भी होती हैं। आप में भी भाषा की उच्च योग्यता पाने की इच्छा थी। इस कारण आप ने पंजाबी में ''ग्यानी'' तथा संस्कृत की ''प्राग्य'' यह दो परिक्षाएं भी उत्तीर्ण की। यह दोनों परिक्षाएं आगे चल कर आर्य समाज सम्बन्धी लेखन कार्य में अत्यधिक सहायक सिद्ध हुई। इस प्रकार आपने विभिन्न परिक्षाएं विभिन्न नगरों से तथा विभिन्न स्कुलों से उत्तीर्ण कीं।

इन द्विनों देश में स्वाधीनता लाने के लिए कांग्रेस के खूब आन्दोलन चल रहे थे। आप अभी विद्यार्थी ही थे कि आप को भी देश के लिए अत्यधिक लगाव हो गया तथा कांग्रेस के आन्दोलनों में भाग लेकर देश को स्वाधीन कराने के लिए जुट गये। इस मध्य ही गान्धी जी ने असहयोग आन्दोलन का शंखनाद कर दिया। आप ने अपनी परिक्षाएं की चिन्ता किये बिना आन्दोलन में आगे आकर कार्य करने की योजना बनाई। परिणाम स्वरूप बी.ए. की पढ़ाई बीच में ही छोड़ कर जेल की यात्रा करनी पड़ी ।।

शिक्षा पूर्ण होने पर आपने सन 1912 में भारतीय रेलवे में पार्सल क्लर्क के रूप में

नौकरी आरम्भ की , जो आप ने सन 1922 इस्वी तक की । आर्य समाज से अत्यधिक लगन हो जाने के कारण तथा स्वाधीन व्यवसाय करने की इच्छा से आपने 1922 में इस पद को तिलांजली देते हुए नौकरी से त्यागपत्र दे दिया तथा अमृतसर आ गये, जहां आपने आर्य प्रेस स्थापित किया । सन 1922 में स्थापित इस प्रेस के माध्यम सन 1950 तक अर्थात भारत के स्वाधीन होने के पश्चात भी आप निरन्तर मुद्रण- प्रकाशन के कार्य में ही रहे।

अब तक आर्य समाज में आप को अत्यधिक रूचि होने से आर्य समाज के कार्यो में भी निरन्तर आगे बढ़ कर कार्य कर रहे थे। इस कारण निरन्तर अठारह से बीस वर्ष तक अमृतसर की आर्य युवक समाज का संचालन करते हुऐ अनेक युवकों को आर्य समाज में लाए तथा उन्हें आर्य समाज के सिद्धान्तो का ज्ञान दिया। आगे चल कर इन में से अनेक युवक आर्य समाज को समर्पित हुए। आप ने लौहगट अमृतसर की आर्य समाज का भी खूब काम किया तथा इस आर्य समाज के आप न केवल मन्त्री ही रहे बल्कि प्रधान के पद को भी सुशोभित किया । आप ने आर्य समाज के प्रति प्रेम के कारण आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा की सदस्यता प्राप्त की। आपको डी.ए.वी कालेज प्रबन्धक समिति का भी स्द्स्य बनाया गया तथा आप की सेवाओं को स्वीकार करते हुए सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा का सदस्य भी बनाया गया।

आप न केवल व्याख्यानों के माध्यम से ही आर्य बनाने का कार्य करते थे बल्कि लेखन से भी आर्य समाज के प्रसार में लगे रहते थे। इस कारण अनेक लेखों के अतिरिक्त आपने आर्य समाज को अपना लिखित उच्चकोटि का साहित्य भी दिया। इस में महर्षि दयानन्द सरस्वती जी का पंजाबी में संक्षिप्त जीवन चरित, पुराणों तथा वाममार्ग का घनिष्ट सम्बन्ध, महा निर्वाण तंत्र क्या है? , इस्लाम कैसे फैला?, महर्षि वर्णन (काव्य में) , गौ विश्व की मां , विविध वैदिक यज्ञ विधान, 1857 के स्वाधीनता संग्राम में महर्षि का योगदान, हमारी भाषा आदि।

इन पुस्तकों के अतिरिक्त आर्य समाज का प्रचार करने के लिए आपने अनेक छोटे छोटे ट्रैक्ट भी लिखे जिनमें मूर्ति पूजा मत खण्डन, अष्टोतर शतवचन्मलिका, नवीन वेदान्त खण्डन, वेद विरोधी अंग्रेजों के पंचमकार, महर्षि के अमृतसर में 127 दिन, हमारी गिरावट के कारण और समाधान, अपने प्रभु से, श्री कृष्ण चरितामृत, नास्तिक मत खण्डन के अतिरिक्त पं. देव प्रकाश अभिनन्दन ग्रन्थ (सम्पादन) आदि।

इस प्रकार जीवन पर्यन्त आर्य समाज का प्रसार करने में व्यस्त रहने वाले इस आर्य नेता का दिनांक 8 सितम्बर 1977 को अमृतसर में ही निधन हो गया। ●

सांस्कृतिक पतनः-

लेखक- राजेन्द्र आर्य, मुजफ्फरपुर

2 फरवरी 1835 को लार्ड मेकाले ने ब्रिटिश संसद में एक वकतव्य दिया था जो इस प्रकार है-

" मैने पूरे भारतवर्ष में चारो ओर भ्रमण किया है और अपने भ्रमणकाल के दौरान हमने एक भी व्यक्ति ऐसा नहीं देखा जो भिखारी अथवा चोर हो, इस देश में इतनी सम्पदा है यहाँ के लोगों का चरित्र इतना उंचा है और लोगों में इतनी योग्यता है कि मैं नहीं समझता कि इन्हे गुलाम बनाया जा सकता, जबतक कि इस देश की रीढ़ की हड्डी को तोड़ नहीं दिया जाय, जो इस देश की आध्यात्मिक व पैतृक सम्पति है, और इसलिए मैं प्रस्ताव रखता हुँ कि उसकी प्राचीन शिक्षा प्रणाली तथा उसकी संस्कृति को बदल दें ताकि वह यह सोचने लगे कि जो कुछ व अंगाल है वह उनसे अधिक महान है। इस प्रकार वे अपना स्वाभाविक संस्कृति को खो देगें और सचमुच हमारी इच्छानुसार हमारे गुलाम बन जाऐगा ।

अपने इसी उद्‌देश्य की पूर्ति हेतु एक अंग्रेज अफसर रावर्ट क्लाइव ने 1760 ई0 में कल्कत्ता में गायों की हत्या हेतु एक कत्लखाना खुलवाया, जबकि मुगल काल में भी इस देश में गोहत्या नहीं होती थी, और इस एक कत्लखाना से बढ़कर अंग्रेजों के शासनकाल में कुल 300 कत्लखाने खुल गये और आज जब हमारी अपनी सरकार है तो इस समय इस देश में हजारों की संख्या में रजिस्टर्ड कत्लखाने है, शायद 36000। और भारत गोमांस निर्यात करने वाला प्रमुख देश बनकर ढ़ेरो सारी विदेशी मुद्रायें अर्जित कर रहा है एक आकलन के मुताविक इस देश में प्रतिवर्ष लगभग 1 करोड़ गायों की हत्या की जा रही है, और लगभग इतनी ही गायें बंग्लादेश को भेजी जा रही है। वही दूसरी ओर स्थिति यह है कि दूध के अभाव में बच्चे कुपोषण के शिकार हो रहे है। इस देश में प्रत्येक 1 मिनट में 5 वर्ष तक के 3 बच्चे की मौत कुपोषण के कारण हो जाती है, अर्थात् प्रत्येक 1 घंटे में 180 और प्रतिदिन लगभग 4320 बच्चें।

दुसरा काम रावर्ट क्लाइव में हमारे नैतिक पतन के उद्‌देश्य से कलकत्ता में ही एक विदेशी शराब की दुकान खुलवाई, इसके पहले अंग्रेज लोग ही सिर्फ अपने ही वास्ते विदेश से इसे मँगवाते थे। इस समय इस देश मे लगभग 3-4 लाख तक विदेशी शराब खरीदकर अपना

जीवन और जवानी दोनों ही वर्वाद कर रहे है। इस शराब के वजह से लाखों घर वर्वाद हो चुके है, और लाखों लोग बिमारियों से ग्रस्त होकर असमय ही मृत्यु को प्राप्त कर चुके है।

एक रिपोर्ट के मुताविक इस देश में प्रतिवर्ष 1 लाख 40 हजार लोग सड़क दुर्घटनाओं में मारे जाते है। जिसका मुख्य कारण होता है शराब ।

अभी अभी होली में सिर्फ उत्तर विहार में 58 व्यक्ति सड़क दुर्घटनाओं में मारे गये है वहा 500 लोग गंभीर रूप से घायल हुऐ जिसका कारण भी रहा है शराब, पता नहीं पूरे देश की स्थिति क्या रही होगी।

अंग्रेजों ने हमारे नैतिक पतन के ही उद्देश्य से एक और काम करके अपनी सारी हदें ही पार कर दी है और वह है कलकत्ता में ही एक वेश्यालय की स्थपना और इस वेश्यालय में करीब 200 महिलाओं को जबरन इस पेशे में उतारा गया। आज इसका स्वरूप इतना विशाल हो गया है कि इस देश में इस समय करीब 20 लाख से भी अधिक वेश्यायें है और कालगर्ल्स की संख्या तो अलग है सोचा जा सकता है कि रावर्ट क्लाइव को कितनी सफलता मिली है अपनी मंसूबों में। ये वेश्याऐं लोगों को यौन रोगी बनाकर उसे असमय ही मृत्यु की ओर ढकेल रही है।

आज इस देश में 55 लाख से भी अधिक लोग एड्स से ग्रस्त होकर जीवन और मृत्यु से संघर्ष कर रहे है।

आज वास्तव में हमारी सनातन वैदिक संस्कृति को नष्ट कर अंग्रजों ने हमारी रीढ़ की हड्डी ही तोड़ डाली है, तभी तो हमें अपना कुछ भी अच्छा नहीं लगता और विदेशी चीजें हमें श्रेष्ठकर लगती है, जिस वजह से हम उसे अपना रहे हैं । विदेशी पहनावे और खान –पान की ही सिर्फ बात नहीं है, हमें विदेशी भाषा, विदेशी शराब, विदेशी सभ्यता, विदेशी कारें, विदेशी कुत्ते और यदि हम यह कहें तो शायद गलत नहीं होगा कि अगर विदेशी मेम हर किसी को उपलब्ध हो सके तो देशी बहुओं को कोई पूछेगा भी नही। विदेशी सभ्यता के आकर्षण ने हमें प्राय: सभी क्षेत्रों में प्रभावित किया है। जरा इसे देखे–

1. खान-पान और पहनावा :– विदेशी सभ्यता ने सर्वप्रथम हमारे खान-पान और पहनावें पर डाका डाला है हम अपने पारम्परिक पहनावें को छोड़कर विदेशी पहनावें शूट–बूट पहनने में गौरवान्वित होते है। लड़कियों पर तो इसका प्रभाव नारी गरिमा पर प्रश्नचिन्ह ही लगा दिया है। उत्तेजक, भड़काऊ तंग और फूहड़

पहनावें में ये बालायें खुलेआम नग्नता और अश्लीलता का प्रदर्शन कर रही है। पिछले कुछ वर्षों में यौन अपराधों में जो वेतहाशा वृद्धि हुई है उसका एक कारण अश्लीलता भी है इसे देखकर लगता है कि इनके अभिभावकों की भी इसमें मौन स्वीकृति है, अथवा वे मजबूर है।

खान-पान में भी हमारा पारम्परिक सात्विक आहार रास नहीं आता है, और माँस, मछली, अंडा, मुर्गी और शराब को हम तेजी से अपना रहें है इस अभक्ष्य आहार और शराब के सेवन के वजह से ही हमारी रोग निरोधक क्षमता तेजी से घट रही है, जिस वजह से हम रोगग्रस्त होकर मृत्यु का प्राप्त हो रहे है। आज 60-65 में ही लोग जाने की तैयारी करने लगते है और 70-75 वर्ष में चले भी जाते है जबकि ईश्वर में हमें 100 वर्ष जीने के लिए अधिकृत किया है। और अंतिम कुछ वर्ष हम घर में अथवा अस्पताल में मृत्यु शय्या पर गुजारते हैं।

2. भाषा पर कुठाराघात:- आज अंग्रेजी भाषा का प्रयोग करने में हम अपनी शान समझते है, अगर अंग्रेजी हमें ठीक से नहीं आती तो अंग्रेजी शब्दों का हम अधिक से अधिक प्रयोग कर अपने को भी अधिक एडवांस समझते हैं। यह अंग्रेजी शिक्षा का ही प्रभाव है कि बच्चे भी जिन्दा बाप को डेड और माँ को ममी से सम्बोधित करते है। अंकल और अंटी में ही बच्चे सारे रिश्ते नाते को समेट देते है। इससे ज्यादा अपनी राष्ट्रभाषा का अपमान और क्या हो सकता है कि हमारे संसद में भी अंग्रेजी का ही बोलबाला है और हमारे प्रधानमंत्री भी लोगों को अंग्रेजी में ही सम्बोधित करते है। यह सब मेकाले की शिक्षा प्रणाली का ही परिणाम है।

3. सामाजिक सदभाव और शांति पर प्रभाव:- जब हमारी संस्कृति ही नष्ट हो गई है तो हमारे शुभ संस्कार कहाँ से बचेंगे आज पूरे देश में हत्या, लूट, बलात्कार, किडनैपिंग, रेप और गैंगरेप का जो बाजार गर्म है उसके पीछे का मूल कारण है अपनी संस्कृति से बहुत दूर चले जाना। आज दिल्ली में हुए दामिनी गैंगरेप इसका ज्वलन्त उदाहरण है। रेप और गैंगरेप का हमारी संस्कृति में कोई स्थान नहीं रहा है।

4. लव का नशा और रिश्ते में कड़ुवाहठ:- विपरीत लिंग के प्रति स्वाभाविक आकर्षण होता है पर आज लव का नशा युवाओं में इतना परवान चढ़ गया है कि इसके प्रभाव में तथा विदेशी सभ्यता से प्रेरित होकर युवावर्ग विवाहपूर्ण अल्पवयस्क अवस्था में ही एक दूसरे के आगोश में आकर अपनी संस्कृति की मार्यादाओं को ही चिढ़ा रहे है, मानो हमारे पूर्वज शायद लव करना जानते हीं नहीं थे। यह लव के

नशा का ही प्रभाव है कि आज लाखों लड़कियाँ कुवारीं माँ बनकर अपने नाजायज सन्तानों की भ्रूणहत्या का पाप भी कर रही है। बहुत जल्द ही जब लव का नशा समाप्त हो जाता है तो स्थिति डाइवोर्स तक पहुँच जाती है। इन असफल शादियों के वजह से कितने ही लड़कियों को आत्महत्या कर लेना पड़ता है, कितनी ही लड़कियाँ परित्यक्त जीवन जी कर अपने भाग्य पर आँसू वहा रही है। हमारे संस्कृति में विवाह जीवन भर के लिये होता है न कि आज इसे छोड़ा, उसे पकड़ा, उसे छोड़ा, और फिर तीसरे को पकड़ा। इसे जीवन भर प्रयोग करते रहते है।

आज विदेशी संस्कृति के रंग में रंगकर हम अपने को इतने आधुनिक और नये समझने लगते है कि हमारे माँ-बाप ही पुराने लगने लगते है।

5. कर्मकाण्डों पर दुष्प्रभाव:- विदेशी संस्कृति के प्रभाव से हमारे पूजा पाठ और कर्मकाण्ड भी नहीं बचे है हमारी संस्कृति में अग्नि का बहुत ही महत्व है, हम प्रतिदिन की शुरूआत और सभी संस्कार अग्निहोत्री यज्ञ से करते थे, पर आज दो संस्कार ही अग्नि के प्रयोग से होता है पहला विवाह के समय अग्नि के फेरे लेकर दूसरा अन्तयेष्टि में अग्नि में भष्म होकर पंचतत्व में विलीन होने के समय, शेष सभी संस्कारों एवं पूजा पाठ के समय में हम अगरबत्ती और मोमबत्ती का ही प्रयोग करते है, जिसका न तो कोई धार्मिक महत्व है और न ही वैज्ञानिक महत्व। जन्मदिन मनाने के समय भी अग्निहोत्री यज्ञ से नहीं बल्कि मोमबत्ती के द्वारा करते है, और वो भी मोमबत्ती जलाकर नहीं बल्कि जलते हुए मोमबत्तियाँ को बुझाकर।

उपरोक्त सभी प्रयास हमारे सांस्कृति पतन के है अतः हम अपने संस्कृति को समझे और इसे ही अपनावे।

पेज 30 का शेष ....

सूक्ष्म-शरीर के बारे में शास्त्रों में विशद वर्णन किया गया है लेकिन इसकी सत्ता कैसे सिद्ध की जाए, उस पर चिन्तन आवश्यक है। सूक्ष्म-शरीर को व्यवहार में इस प्रकार प्रमाणित किया जा सकता है- नींद आने के बाद स्थूल-शरीर की सारी इन्द्रियां अकर्मण हो जाती हैं लेकिन नींद में हम बिना स्थूल-शरीर की आंखों के हम देखते हैं। बिना स्थूल-शरीर के कानों के हम सुनते हैं। बिना स्थूल-शरीर के पैरों को हिलाए हम भागते हैं। बिना स्थूल-शरीर की इन्द्रियों के स्पन्दन के हम देखते, सुनते और चलते है। यह क्या सूक्ष्म-शरीर की क्रिया नहीं है? इतना ही क्यों कभी-कभी जागते हुए भी हम न देखते हैं न सुनते हैं और न कोई स्पन्दन होता है। लगता है कहीं किसी और लोक में हम होते हैं। यह लोक सूक्ष्म-शरीर का होता है, जिसे आम आदमी नहीं जानता, समझता है।

संस्कार : मानव-निर्माण की बुनियाद

लेखक- अखिलेश आर्येन्दु, नई दिल्ली

संस्कार किसे कहते हैं?

चरक ऋषि के अनुसार- **संस्कारो हि गुणान्तराधान मुच्यते'** -अर्थात् संस्कार पहले से ही विद्यमान दुर्गणों को हटाकर उनकी जगह सद्गुणों का आद्यान कर देने का नाम है। **संस्कार** शब्द की व्युत्पति सम् उपसर्ग और कृधातु के धय प्रत्पप करने पर निष्पन्न होता है। इस प्रकार शास्त्र संस्कार का अर्थ- परिष्कार, सुधार, शुद्धिकरण अथवा पवित्रीकरण बताते है। इससे विकारों को दूर कर सुसंकृत विचारों के लिए आधार-भूमि तैयार करने का नाम भी संस्कार है। तन्त्रवार्तिक में संस्कार के विषय में कहा गया है- संस्कार वे क्रियाएं हैं, जो व्यक्ति को योग्यता प्रदान करती है। वीर मित्रोदय के अनुसार संस्कारों से शास्त्रोक्त कर्म करने की योग्यता प्राप्त होती है।

शास्त्रों में संस्कार प्राय: दो अभिप्रायों में प्रयुक्त होता है। दार्शनिक (शास्त्रीय) अर्थ में संस्कार का अभिप्राय यह है कि किसी एक मानव के प्रथम से जो एक बात चली जा रही है उसे बदल देना संस्कार है। वेशैषिक दर्शन में कहा गया है- **''इन्द्रियदोषात संस्कार दोषाच्चाविद्या''** अर्थात् किसी के अन्दर अविद्या मूल आदि भ्रान्ति संस्कारों के द्वारा होती है इसे हटाना संस्कार है। महर्षि दयानन्द ने स्वमन्तव्य प्रकाश में कहते हैं- संस्कार उसको कहते हैं कि जिससे शरीर मन व आत्मा उत्तम होता है।

महामुनि पाणिनी के अनुसार- **'सपरिभ्यां करोतु भूषणे'** अर्थात् संस्कार का अर्थ भूषा है। भूषा तीन प्रकार की होती है। 1. शोधन भूषा, 2. गुण भूषा, 3. शक्ति भूषा इस प्रकार कहा जा सकता है वस्तुओं में शोधन भूषा लाना, गुणभूषा लाना और शक्ति लाना, संस्कार है। इसी को दोषापनयन, हीनांगपूर्ति और गुणाधान कहा जाता है।

अनेक विचारक संस्कार को दो भागों में विभक्त करते हैं पूर्वजन्म के संस्कार :- जो पूर्णत: परमात्मा की कृपा का फल या परिणाम हैं और जन्म के संस्कार जो मुख्यत: मनुष्य के कर्म पर निर्भर करते हैं। परमात्मा ने जो संस्कार दिये हैं उसके कारण मां गर्भ भ्रूण का पालन करती है तो मां - पृथवी के गर्भ में पालन करता है, वायु उसे प्राण देती हैं, अग्नि उसे तापमान देती है। आकाश उसे स्वतन्त्र-चिन्तन देता है, मन, बुद्धि, अहंकार उसे अस्तित्व की पहचान

देते हैं। मां का भोजन उसे अन्न देता है। मन, बुद्धि, अहंकार उसे अस्तित्व की पहचान देते है। मां का भोजन उसे अन्न देता है मां ही उसे सुरक्षा देती है।

मां ईश्वर के विज्ञान को अनुभव तो करती है पर उसके बारे में कुछ भी नहीं जानती है। नौ महीने के बाद जब भ्रूण बालक बनकर उत्पन्न होता है तो प्रकृति के भीतरी तत्व उसे अपने बाहरी तत्वों के हवाले कर देते है। प्रकृति के बाहरी तत्वों का प्रत्यक्ष प्रतीक माता-पिता ही होते हैं। यहां से अब उसके उत्तर जन्म संस्कार प्रारम्भ हो जाते हैं। धरती पर शिशु का जन्म हुआ। उसके सामने तीन प्रथम प्रेरणा देने वाले शिक्षक मिल जाते हैं। शतपथ ब्रह्मण में इनकी वन्दना करते हुए कहा गया है- **मातृमान पितृमानाचार्यवान् पुररुषोवेद**। सब से पहली प्रेरणास्रोत मां सामने होती है। यहा मां ही सबसे अधिक बच्चे में अच्छे संस्कार, प्रवृत्तियों एवं मानवीय मूल्यों का आधान करती है। लेकिन मां ने अपना कर्तव्य न निभाया तो बच्चे में कुसंस्कार, कुप्रवृत्तियां और अमानवीय मूल्यों का बीजारोपण हो जाता है। इसलिए महर्षि दयानन्द सरस्वती ने प्रेरणा व उपदेश करते हुए माता-पिता को सजग करते हैं। सत्यार्थ प्रकाश के द्वितीय समुल्लास में वे कहते है सन्तान जितेन्द्रिय, विद्याप्रिय और सत्संग में रुचि करे वैसा प्रत्यत्न करते रहें। व्यर्थ क्रीड़ा, रोदन, हास्य, लड़ाई, हर्ष, शोक किसी पदार्थ में लोलुपता, ईर्ष्या, द्वेषादि न करें। सदा सत्य भाषण शौर्य, धैर्य और प्रसन्नवदन आदि गुणों की प्राप्ति जिस प्रकार हो, करायें।

इसी प्रकार पिता नवजात शिशु को जाने-अनजाने में प्रेम, दया, न्याय, अहिंसा, सत्य, परोपकार और करुणा को अन्त:करण में आधान करा सकता है। इसके लिए कोई अलग से उसे पढ़ाने या सिखाने की आवश्यकता नहीं पड़ती बल्कि घर-परिवार में प्रचलित लोक कथाएं, कहावतें और प्रेरक प्रसंग प्रर्याप्त होते हैं। यह एक सहज प्रक्रिया है जिस पर थोड़ा सा भी ध्यान देकर उत्तम परिणाम प्राप्त किये जा सकते हैं। ऐसा बालक जिसे घर के आनन्दमय वातावरण में ही सुसंस्कारों की धारा प्राप्त हुई हो वह तो कभी भी नकारात्मक प्रवृत्ति की ओर जाएगा ही नहीं। मानवीय मूल्यों से ओतप्रोत ऐसा बालक शीघ्र उत्तम संस्कारों को आत्मसात कर लेता है। ऐसा बालक ही आगे चलकर एक आदर्श एवं विशिष्ठ व्यक्तित्व में परिवर्तित हो जाता है, जो केवल अपने ही लिए नहीं बल्कि समाज के लिए अधिक विवेकशील, उत्तरदायी, व कर्तव्यपारयण बन जाता है।

यह ध्यान देने की बात है कि संस्कार से मन, शरीर और आत्मा तीनों का परिष्कार होता है। इसलिए जितने शुद्ध, पवित्र और आदर्श भावभूमि वाले संस्कार बच्चों को आत्मसात् करने के लिए प्रेरित करेंगे उसका सुफल भी उसी उच्चादर्श और विशुद्धता से परिपूर्ण होगा।

महाभारत में कौरव पाण्डव के बचपन की कथाएं हैं। इन कथाओं से यह ज्ञात होता है कि राजकुल में भी शिशुओं की कैसे-कैसे संस्कार दिये गये जिसका परिणाम यह हुआ पाण्डव में प्रेम, अहिंसा, न्याय, दया, करुणा और परोपकार जैसे मानवीय मूल्यों का अधिक्य था वहीं पर कौरव में पाण्डवों के प्रतिकूल मूल्य ही समावेशित थे। कौरवों में यदि इनके जीवन के प्रारम्भ से ही सुसंस्कार और मानवीय मूल्यों को आत्मसात कराए गए होते तो शायद महाभारत का यह महायुद्ध न होता और नही करोड़ों लोग असमय में काल कलवित हुए होते। कहने का तात्पर्य यह है सुसंस्कार और मानवीय मूल्य इतिहास या काल की धारा के प्रवाह को मोड़ने में सक्षम होते हैं। इसीलिए हमारे वैदिक ऋषि-महर्षियों ने मनुष्य को सच्चे अर्थों में मनुष्य बनाने के लिए गृहसूत्रों, उपनिषदों एवं स्मृतियों की रचना की। वैदिक ज्ञान ग्रन्थों में संस्कार क्या, क्यों और कैसे का विस्तार से वर्णन किया गया है। मनुष्य के जीवन में कितने संस्कार कराए जाने चाहिए, उसकी विधि-विधान और उसके प्रभाव का रोचक एवं प्रभावकारी वर्णन किया गया है। आज यदि परिवार, समाज व संस्कृति पर प्रश्न उठाए जा रहे हैं तो उसका एक कारण संस्कारों को जीवन में आत्मसात् न करना है। यदि कर्मकाण्डों को छोड़ दे तो संस्कार देने का परिवारों में कोई कार्य नहीं किया जाता है। इसका परिणाम यह हो रहा है परिवारों के बच्चों में न किसी प्रकार के संस्कार आत्मीभूत हो पा रहे है और न ही परिवारों में वे आदर्श व जनहितकारी कार्यों के प्रति किसी की रूचि ही बन पाती है। संस्कार न होने के कारण आज का शिशु या किशोर बड़ा ऑफिसर, डॉक्टर, इंजीनियर या कम्पनी सेक्रेटरी तो बनना चाहता है लेकिन एक श्रेष्ठ मानव नहीं बनना चाहता। उसमें परहित के लिए त्याग नहीं है। उसे उद्वेलित जाता हैं उस लक्ष्य के प्राप्ति के लिए जिसे परिवार के लोग निर्धारित करते हैं। लक्ष्य प्राप्ति के बाद वह सारी सुख-सुविधायें जुटाने में लग जाता है, और सुख-सुविधाओं के जुटाने में उसका सारा जीवन बीत जाता है। संस्कार रहित होने का यह परिणाम अभी हमें कितना नीचे गिरायेगा, बताना मुश्किल है। लेकिन अभी संवेदनाएं,

परम्पराएं और मानवता की भाव धारा पूरी तरह छिन्नभिन्न नहीं हुई है। अभी हम परिवार व मस्तिष्क के द्वारा सूक्ष्म-शरीर में पहुंच जाता है। यहां यह जानने योग्य बात है कि संस्कारों का

समाज को नवनिर्माण के पावन पथ पर आगे बढ़ा सकते हैं।

संस्कार रहते कहां है?

यह प्रश्न किया जा सकता है कि जिन संस्कारों के बलबूते मनुष्य मानव बनने की प्रक्रिया में होता है वे रहते कहां हैं? मनोवैज्ञानिकों और अध्यात्म वेत्ताओं के अनुसार स्थूल-शरीर के भीतर एक सूक्ष्म-शरीर भी होता है। आत्मा अभौतिक है, उसका भौतिक-सूक्ष्म-शरीर से सीधा सम्बन्ध नहीं हो सकता। माध्यम के तौर पर अभौतिक आत्मा तथा भौतिक-शरीर के बीच में 'सूक्ष्म-शरीर' आता है। यह इतना सूक्ष्म है कि अभौतिक के समान है, और क्योंकि वह प्रकृति के सूक्ष्म तत्त्वों से बना है इसलिए वह भौतिक के समान है। अभौतिक होने के कारण इसका और आत्मा से सीधा सम्बन्ध है। भौतिक होने के कारण इसका सूक्ष्म-शरीर से, मस्तिष्क से और मस्तिष्क पर पड़े आलेखनों से भी सीधा सम्बन्ध है।

यही वजह है कि मस्तिष्क पर जो संस्कार भौतिक रूप से पड़ते है। रेखाएं खिंचती है, वे सब एक ओर स्वभाव बन जाती है, यह सब

क्षेत्र मस्तिष्क न होकर सूक्ष्म-शरीर हो जाता है। सूक्ष्म-शरीर में संस्कार हमेशा के लिए पड़े रहते है। यहां तक कि भौतिक-शरीर के अवसान के बाद भी यह सूक्ष्म-शरीर नहीं समाप्त होगा। इसलिए सूक्ष्म-शरीर के द्वारा संस्कार अनन्तकाल तक पड़े रहते हैं। जब तक शिशु को बहुत ही सूक्ष्म तरीके और गहनता से सुसंस्कार आत्मवेशित नहीं कराए जाते तब तक शिशु में वह परिवर्तन नहीं आ पाता जो परिवार या समाज चाहता है। कहने का अर्थ यह है कि शिशु में जिस स्तर और गुणवत्ता का संस्कार परिवार व समाज देता है उसका प्रभाव केवल इस जन्म तक ही नहीं होता है बल्कि अनेक जन्मों तक वे संस्कार फली भूत होते रहते है। यह बात न आमतौर पर बच्चे के माता-पिता या घर के सदस्य जानते हैं और न ही समाज। इसलिए सभी संस्कार के मायने में उदासीन औ अव्यावहारिक रवैया अपनाते हैं। इसलिए संस्कार के बारे में प्राथमिकता यह होनी चाहिए कि उसके सूक्ष्म प्रभावों और लाभों तथा हानियों की जानकारी आम लोगों तक पहुंचाई जानी चाहिए।

शेष पेज 26 पर....

समाचार

वेद सम्मेलन सम्पन्न

आर्य समाज कसबा, पूर्णियाँ द्वारा चार दिवसीय वेद सम्मेलन का आयोजन 28 से 31 मार्च 2014 तक भव्य रूप से किया गया। इस अवसर पर आचार्य असर्फीलाल शास्त्री, इलाहाबाद, पं० नवल किशोर शास्त्री, समस्तीपुर, पं० संजय सत्यार्थी, पटना, पं० अरूण शास्त्री, समस्तीपुर, पं० प्रदीप शास्त्री, फरीदाबाद, पं० विनोद शास्त्री, पटना से पधारें।

प्रात: 8 बजे से 11 बजे तक यज्ञ एवं कथा तथा सायं 4 बजे से रात्रि के 10 बजे तक भजन, प्रवचन एवं वेद कथा निरंतर चार दिनों तक होता रहा। 30 मार्च को अपराह्ण 2 बजे से 5 बजे तक महिला सम्मेलन का भी आयोजन किया गया, जिसकी अध्यक्षता सुप्रसिद्ध समाज सेविका श्रीमति उषा देवी आर्या ने किया। मुख्य अतिथि के रूप में श्रीमती स्वाति वैश्यन्त्री जी, श्रीमती तारा साहा जी, श्रीमती रूबी सिंहा जी, एवं श्रीमती अर्चना जी उपस्थित थी।

इस कार्यक्रम को सफल बनाने के लिये उपप्रधान श्रीमती शांति आर्या जी का योगदान काफी सराहनीय रहा। प्रधान श्री जय प्रकाश आर्य मंत्री श्री इन्द्रप्रकाश कोषाध्यक्ष श्री अशोक आर्य एवं आर्य समाज फारबिसगंज के प्रधान श्री गोविन्द प्रसाद आर्य का पुरूषार्थ काम आया।

शांतिलता आर्या

उप प्रधाना, आर्य समाज कसबा

वैदिक रीति के शांतियज्ञ सम्पन्न

आर्य समाज गड़हरा बेगुसराय के मंत्री श्री प्रेम कुमार पिण्टु के बड़े भाई श्री विष्णु देव साह जी का देहांत 9/4/14 को हृदय गति रूक जाने से हो गया। मृत्यु के उपरान्त 11.04.14 को पं० संजय सत्यार्थी जी के द्वारा उनके निवास स्थान पर शांति यज्ञ सम्पन्न करवाया गया। जिसमें डॉ० अशोक गुप्ता, बेगुसराय, के अलावा आर्य समाज गढ़हरा एवं बारो के समस्त पदाधिकारी एवं सदस्यों ने भाग लिया।

प्रेम कुमार पिंटू

सत्यार्थ प्रकाश सम्मेलन सम्पन्न

आर्य समाज केन्दुआ लेआर झाझा, जमुई के तत्वावधान में तीन दिवसीय सत्यार्थ प्रकाश सम्मेलन एवं राष्ट्र रक्षा महायज्ञ का आयोजन 1 से 6 अप्रैल 2014 तक किया गया। यज्ञ के ब्रह्मा पं० सत्यार्थी के द्वारा उल्लासमय वातावरण में यज्ञ करवाया गया, साथ ही आर्य समाज के नये भवन का उद्घाटन यज्ञ के ब्रह्मा एवं बिहार राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा के उप मंत्री पं० संजय सत्यार्थी जी के कर कमलों द्वारा किया गया तत्पश्चात ओ३म् ध्वज का उत्तोलन मगध प्रमण्डलीय आर्य सभा के प्रधान श्री बच्चु लाल आर्य के द्वारा किया गया।

इस अवसर पर आर्य जगत के उद्भट् विद्वान आचार्य वेद प्रकाश श्रोत्रिय के पावन प्रवचन ने श्रोताओं को मंत्रमुग्ध कर दिया। साथ ही पं० दिनेश दत्त और बहन धर्म रक्षिता के भजन एवं कवि सत्यार्थी जी के कविता पाठ इस बार के कार्यक्रम में नवीनता का संचार हो रहा था। सायंकाल भी हजारों की हाजरी में श्रोताओं ने ज्ञान लाभ प्राप्त किया। इस अवसर पर जमुई जिला आर्य सभा प्रधान श्री गोपाल प्रसाद आर्य, आक्फोर्ड आवासीय पब्लिक स्कूल के प्राचार्य श्री मनोज कुमार सिन्हा आदि भी उपस्थित हुए।

संजय आर्य

मंत्री, आर्य समाज, छेदुआ लेआर, झाझा

दीप राज का अन्नप्रासन

आर्य सभासद् श्री नन्द लाल साह जी के कनिष्ठ सुपुत्र श्री सुबोध कुमार जी की प्रथम सन्तान दीपेन्द्र राज का अन्न प्रासन संस्कार चैत्रकृष्ण पक्ष चतुर्थी 2070 को अपराह्न 4 बजे से आर्य समाज नेमदार गंज के पुरोहित सत्यदेव प्रसाद आर्य 'मरूत' के पौराहित्य एवं मन्त्री श्री सन्त शरण आर्य की विशेष उपस्थिति में 20.3.14 को सम्पन्न हुआ। दिल्ली से बड़े भ्राता डॉ० अजय कुमार एम.बी.बी.एस. (हिन्दू राव अस्पताल) एवं श्री संजय सत्यार्थी उपमन्त्री बिहार राज्य आर्य प्रतिनिध सभा, पटना के साथ ग्रामवासी गणमान्य स्त्री पुरूषों ने शिशु को आशीर्वाद प्रदान किया कार्यक्रम के समापन में जलपान के अतिथ्य से सबका सत्कार किया गया।

संस्कार में वेद मन्त्रों से 1. प्राण, 2. अपान , 3. चक्षु, 4 कान के लिये अन्न का क्या-क्या सम्बन्ध जुड़ता है इस पर खोज करने की आवश्यकता पर पुरोहित जी ने संकेत किया। विद्वान गण चिन्तन करें। अन्न का दाना सबको खाना जीव जन्तु को प्रिय लगता। खाना है आसान कठिन होता उपजाना यह तो केवल मनुष्य समझता ।

प्रमुख अन्तर्राष्ट्रीय सम्वत जिससे आपको विदित हो कि वैदिक धर्म कितना पुराना है।

सधि काल जोड़कर सृष्टि सम्वत- 1.97.29.49.116	वेदो उत्पती सम्वत - 1.96.08.53.115
रामराज्य सम्वत - 11.93.28	श्री कृष्ण सम्वत - 5229
युधिष्ठिर सम्वत राज्य रोहन से- 4455	कलयुग सम्वत - 5114
अग्रसेन सम्वत - 5025	आर्य समाज स्थापना दिवस - 139
फारसी जरधुम्मन सम्वत - 4552	हजरत मुसाई सम्वत - 3496
दयानन्द निर्वाण दिवस - 131	मोहम्मद संवत मक्का छोड़ मदीना जाने से - 1432
वार्म मार्ग सम्वत - 3085	बौद्ध सम्वत - 2617
जैन सम्वत - 2615	यूनानी सम्वत - 2811
महावीर निर्वाण सम्वत - 2241	पूरानी पंथ सम्वत - 2535
शंकराचार्य वेदान्त सम्वत - 2885	विक्रमादित्य के राज्य रोहन से सम्वत- 2071
ईसा के जन्म से 4 वर्ष के बाद से सम्वत - 2014	शक सम्वत - 1936
शाल वहान साके - 1936	बंगाल सम्वत - 1410
हिजरी सम्वत् 1434	कबरी पंथ सम्वत - 469
नेपाली सम्वत् - 1136	फसली सम्वत - 1421
गुरूनानक सम्वत - 474	दयानन्द सम्वत - 1895
	कामता प्रसाद आर्य आरा

वैदिक धर्म की जय !

आर्य समाज की जय !!

प्रेषक
मंत्री
बिहार राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा
श्री मुनीश्वरानन्द भवन, नयाटोला
पटना-800 007

सेवा में,
श्री/मेसर्स ....
मो. ....
पो. ....
जिला ....

मुद्रित सामग्री

(प्रतिलिपि के न मिलने पर [illegible] प्रबंधक को ही लौटा दें।)

ने सब कुछ जीत लिया था परन्तु भीतर के शत्रु नहीं जीत पाये इसलिए

लंगोटी वाले फकीर के सामने उसका सिर झुक गया।

आज आवश्यकता है मनुष्य भीतर के शत्रु पर विजय प्राप्त करे क्योंकि असली जीत बाहर की जीत नहीं भीतर की जीत होती है। भीतर की जीत के लिये, भारतीय संस्कृत का अवलम्बन करना होगा, जहाँ वेद उपनिषद् दर्शन शास्त्र आदि का ज्ञान मनुष्य को मनुष्य पर विजय प्राप्त करने का संदेश देती है। एक ओर जहाँ महर्षि पतंजलि अष्टांग योग का संदेश देकर अध्यात्म पथ पर चलने की प्रेरणा देते हैं वहीं मनु महाराज मनुर्भवः का पाठ पढ़ाकर मनुष्य बनने की शिक्षा देते हैं। जिसने ऋषि-महर्षि के बताये मार्ग का अनुगमन कर आनन्द की तृष्णा को मार दिया वही असली विजय रथ पर सवार होता है।

पं० संजय सत्यार्थी
सह-संपादक

दयानन्द के जन्म से हुई सत्य बरसात ।
सदी-सदी थी बांझ अब खिले मंत्र जलपात ।।
योग्य चिकित्सक आ गया मचा विश्व में शोर ।
जागे गहरी नींद से लगा दीखने चोर ।।
पाखण्डों का पीलिया अँधियारा घनघोर ।
दयानन्द दिनकर उगा हुई भोर हर ओर ।।
तर्क तीर बौछार से छिन्न-भिन्न अँधियार।
मरूस्थल में वर्षा हुई आई वेद बहार ।।
वंजर में भी हल चले हलचल मची अकूत ।
ऋषिवर की हुंकार से भागे भ्रम के भूत ।।

सारस्वत मोहन मनीषी

स्वत्वाधिकारी, बिहार राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा,, श्री मुनीश्वरानन्द भवन, नयाटोला, पटना-4 के लिए श्री रमेन्द्र कुमार गुप्ता (मंत्री) द्वारा जय उमा प्रिन्टर्स, पटना द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित।